कक्षा–नवमी (9)

पाठ्यक्रमः

विषयः – संस्कृतम्

पूर्णांकाः 20

1. <u>रचनात्मकं कार्यम्</u> 5

1. संस्कृतानुवादः
2. पत्रलेखनम्
3. चित्रवर्णनम्
4. कथावबोधनम्

2. <u>व्याकरणम्</u> 5

क) संधिः

1) स्वरसंधिः – दीर्घ, गुण, वृद्धि
2) व्यंजनसंधिः – श्चुत्व, जश्त्व

ख) प्रत्ययाः – क्त्वा, तुमुन्, ल्यप्

ग) विभक्तिप्रयोगः–

कारकविभक्तिः

घ) शब्दरूपाणि – अस्मद्, युष्मद् (सर्वनाम–शब्दरूपाणि)

अकारान्तः, इकारान्तः, (पुंल्लिङ्ग शब्दाः), अकारान्तः (नपुंसकलिङ्ग शब्दाः)

आकारान्तः, इकारान्तः (स्त्रीलिङ्ग शब्दाः)

ङ) धातुरूपाणि – त्रयः लकाराः – लट्लकारः, लृट्लकारः, लङ्लकारः

धातवः – पठ्, लिख्, खाद्, हस्, क्रीड्, गम्, पिब्, (पा)

च) अव्ययपदानि– अत्र, तत्र, सर्वत्र, कुत्र, प्रातः, सायं, च, अपि, एव, अद्य, ह्यः, श्वः।

छ) संख्याज्ञानम्– 1–50 पर्यन्तम्

3. <u>नैतिक शिक्षा</u> 5

क) निम्नश्लोकानां मञ्जूषायां प्रदत्तशब्दैः अन्वयपूर्तिं भावार्थपूर्तिं च कुरुत–

1) उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि.....।

2) पापान्निवारयति योजयते हिताय........।

3) अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।

4) माता शत्रुः पिता वैरी........।

5) श्रोत्रं श्रुतेनैव न कुण्डलेन.......।

4. <u>भारतीयज्ञानपरम्परा</u> 5

क) वैदिकसाहित्यस्य परिचयात्मक–ज्ञानम्

(1) वेदाः

(2) वेदाङ्गानि

ख) लौकिकसाहित्यस्य परिचयात्मक–ज्ञानम्

(1) रामायणम्

(2) महाभारतस्य श्रीमद्भगवद्गीतायाः च परिचयः

(3) पन्चतन्त्रम् हितोपदेशः च

<u>परिशिष्टम्</u>

1 व्यावहारिकं संस्कृतम्

संस्कृतभाषायाम् आत्मपरिचयः
यथा–
अहं सुरेशः। भवान् कः ?
अहं नरेशः। भवती का ?
अहं गीता। (इत्यादयः)
..........इत्यादयः।
(शिक्षकाः छात्राणां माध्यमेन अस्य अभ्यासं कारयिष्यन्ति।)

2 शब्दरूपाणां वाक्येषु प्रयोगः

3 धातुरूपाणां वाक्येषु प्रयोगः

पाठ्यपुस्तकम्

कक्षा–नवमी (9)

प्रार्थना

ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रं तन्न आ सुव।– ऋग्वेद (30.3)

"हे प्रकाशमान देव, सविता! हमारे सभी दुर्गुणों और बुराइयों को दूर करो और जो कल्याणकारी है, उसे हमें प्रदान करो।"

"O luminous God, Savita! Remove all our vices and evils and grant us that which is auspicious."

ॐयो भूतं च भव्यं च सर्वं यश्चाधितिष्ठति।

स्वर्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः।। –अथर्ववेद (१०.२३.४.१)

जो परमेश्वर भूतकाल, वर्तमान और भविष्यत् है। इन तीनों कालों के बीच में जो कुछ होता है, उन सब व्यवहारों को वह यथावत् जानता है तथा जो सम्पूर्ण जगत् को अपने विज्ञान से ही जानता, रचता, पालन और लय करता है। जो संसार के सब पदार्थों का अधिष्ठाता और स्वामी है और ज्येष्ठ अर्थात् सबसे बड़ा, सब सामर्थ्य से युक्त ब्रह्म अर्थात् परमात्मा है, उसको हमारा नमस्कार हो।

The God who is the past, the present, and the future, knows all the activities that happen between these three time periods exactly as they are, and He who knows the whole universe through His knowledge, creates, nurtures, destroys, and is the ruler and master of all things in the universe. Jyestha means the greatest Brahma who is the Supreme Being and is full of all powers. We salute him.

ॐ स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।

पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि। –ऋग्वेद (५.५१.१५)

हम सूर्य और चन्द्रमा की भाँति कल्याण युक्त मार्ग पर चलते रहें। दानी, अहिंसाकारी, ज्ञानी जनों तथा परमात्मा से मेल कर सदा सुख प्राप्त करें।

Like the Sun and the Moon, we should continue to walk on the path of welfare. We should always be happy by associating with charitable, non-violent, knowledgeable people and God.

पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती यज्ञं वष्टु धियावसुः।। –ऋग्वेद (1.3.10)

हमारी सरस्वती हमें पवित्र करने वाली है। जो अन्न, धन, ज्ञान और वेगों से युक्त हैं। वह बुद्धि और कर्म के द्वारा हमारे यज्ञ को पूर्ण या सफल करें।

Our Saraswati who purifies us. She who is full of food, wealth, knowledge and speed. May she complete our yajna (sacrifice) or make it successful through her intelligence and actions.

1.रचनात्मकं कार्यम्

1. संस्कृतानुवादः

(क) वाक्य–विचार–

संस्कृत वाक्य–रचना में सामान्यतः सर्वप्रथम उद्देश्य (कर्ता) फिर कर्म तथा क्रिया–विशेषण तथा अन्त में क्रिया होती है।

वाक्य–विचार में तीन बातें मुख्य होती हैं– वर्णों का परस्पर सम्बन्ध, वाक्यानुशासन तथा शब्दक्रम। संस्कृत भाषा में उदारता बहुत है, अतः इसमें शब्दक्रम को गौण स्थान दिया जाता है। अन्य भाषाओं में यदि शब्द–क्रम बदल दिया जाए तो वाक्य अशुद्ध हो जाता है या उसके अर्थ में परिवर्तन हो जाता है किन्तु संस्कृत में न तो अशुद्ध होता है और न ही अर्थ में परिवर्तन होता है। इसलिए संस्कृत में वाक्य–रचना अपेक्षाकृत सरल है। यथा– राजा दिलीपो नाम आसीत् अथवा आसीत् राजा दिलीपो नाम। इन दोनों वाक्यों में अर्थ का परिवर्तन नहीं हुआ है।

वचन– संस्कृत में तीन वचन होते हैं– एकवचन, द्विवचन एवं बहुवचन।

पुरुष– संस्कृत में पुरुष तीन होते हैं– प्रथम पुरुष, मध्यम पुरुष एवं उत्तम पुरुष।

	एक वचन		द्विवचन		बहुवचन	
प्रथम पुरुष	सः, सा, तत्	वह	तौ, ते, ते	वे	ते, ताः, तानि	वे सब
मध्यम पुरुष	त्वम् (तू)		युवाम् (तुम दो)		यूयम् (तुम सब)	
उत्तम पुरुष	अहम् (मैं)		आवाम् (हम दो)		वयम् (हम सब)	

धातु रूप में भी तीन पुरुष होते हैं–

प्रथम पुरुष	गच्छति	गच्छतः	गच्छन्ति
	(वह जाता है)	(वे दो जाते हैं)	(वे सब जाते हैं)

	(वह जाती है)	(वे दो जाती हैं)	(वे सब जाती हैं)
मध्यम पुरुष	गच्छसि	गच्छथः	गच्छथ
	(तू जाता/जाती है)	(तुम दो जाते/जाती हो)	(तुम सब जाते/जाती हो)
उत्तम पुरुष	गच्छामि	गच्छावः	गच्छामः
	(मैं जाता/जाती हूँ)	(हम दो जाते/जाती हैं)	(हम सब जाते/जाती हैं)

(ख) वाक्य–विस्तार–

यदि वाक्य को विस्तार देना है तो हमें अन्य कारकों की सहायता लेनी होती है। कारकों के विषय में विस्तार से हम व्याकरण भाग में पढेंगे। यहां केवल रचनात्मक कार्य की दृष्टि से उनके कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं। 1. जैसे कि किसी कार्य को करने वाला 'कर्त्ता' कारक कहलाता है। उदाहरण–

१.	छात्रः पठति।	छात्र पढ़ता है।
२.	अजयः गच्छति।	अजय जाता है।
३.	अर्चना क्रीडति।	अर्चना खेलती है।
४.	त्वं गच्छसि।	तू/तुम जाती हो/जाते हो।
५.	अहं चलामि।	मैं चलता/चलती हूँ।

1. क्रिया के विषय को कर्म कहते हैं। उदाहरण–

१.	छात्रः पाठं पठति।	छात्र पाठ पढ़ता है।
२.	जनकः फलानि आनयति।	पिता फल लाता है।
३.	अध्यापकः पुस्तकं पाठयति।	अध्यापक पुस्तक पढ़ाता है।
४.	अश्वः घासं खादति।	घोड़ा घास खाता है।
५.	अहं भोजनं करोमि।	मैं भोजन करता हूँ।

2. जब कर्त्ता किसी कार्य को करने के लिए किसी वस्तु के द्वारा सहायता प्राप्त करता है तो उसे करण (साधन) कहते हैं। उदाहरण–

१. छात्रः कलमेन लेखं लिखति। छात्र कलम से लेख लिखता है।

२. अहं हस्ताभ्यां कार्यं करोमि। मैं हाथों से कार्य करता हूँ।

३. बालकः नासिकया जिघ्रति। बालक नाक से सूँघता है।

४. वयं पादाभ्यां चलामः। हम पैरों से चलते हैं।

५. बालिका नेत्राभ्यां पुष्पं पश्यति। बालिका आँखों से फूल देखती है।

3. कर्त्ता जिसके लिए कार्य करता है, वह व्यक्ति या उद्देश्य 'सम्प्रदान' कहलाता है। उदाहरणः—

(क) छात्रः पठनाय उपविशति। छात्र पढ़ने के लिए बैठता है।

(ख) पिता पुत्राय फलं यच्छति। पिता पुत्र को फल देता है।

(ग) गोविन्दः भोजनाय गृहं गच्छति। गोविन्द भोजन के लिए घर जाता है।

(घ) वारिदः सस्याय वर्षति। बादल अनाज के लिए बरसता है।

(ङ) अहं तस्मै लिखामि। मैं उसके लिए लिखता हूँ।

4. जब कोई पदार्थ किसी दूसरे से अलग होता है तो उसे अपादान कहते हैं। उदाहरण :—

(क) वृक्षात् पत्राणि पतन्ति। पेड़ से पत्ते गिरते हैं।

(ख) अश्वात् बालकः पतति। घोड़े से बालक गिरता है।

(ग) मेघात् जलं वर्षति। बादल से जल बरसता है।

(घ) गृहात् चौरः धावति। घर से चोर भागता है।

(ङ) लतायाः पुष्पाणि पतन्ति। बेल से पुष्प गिरते हैं।

5. हिन्दी में जिसे प्रकट करने के लिए का, के, की और सर्वनामों में रा, रे, री, चिह्नों का प्रयोग किया जाता है। यह षष्ठी विभक्ति है। उदाहरण :—

(क) रामः दशरथस्य पुत्रः आसीत्। राम दशरथ के पुत्र थे।

(ख) इदं पितुः/जनकस्य कार्यम् अस्ति। यह पिता का कार्य है।

(ग) इयं मम लेखनी अस्ति। यह मेरी लेखनी है।

(घ)	गोविन्दस्य वस्त्रं सुन्दरम् अस्ति।	गोविन्द का वस्त्र सुन्दर है।
(ङ)	सा मम भगिन्याः सहपाठिनी अस्ति।	वह मेरी बहन की सहपाठिनी है।

6. आधार को अधिकरण कहते हैं। उदाहरण :–

(क)	जले मीनाः तरन्ति।	जल में मछलियाँ तैरती हैं।
(ख)	बालः पात्रे दुग्धम् आनयति।	बालक बर्तन में दूध लाता है।
(ग)	तस्य हृदये दयाभावः अस्ति।	उसके हृदय में दयाभाव है।
(घ)	गृहे जनाः वसन्ति।	घर में लोग रहते हैं।
(ङ)	मन्जूषायां वस्त्राणि सन्ति।	सन्दूक में कपड़े हैं।

(ग) क्रिया–विस्तार

संस्कृत भाषा में क्रिया के मूल रूप को धातु कहते हैं, जो वाक्य बनाने का आधार हैं। ये धातुएँ (जैसे–चल्,दृश्, कृ, 'भू', लिख्, 'गम्, पा, 'पठ्') अलग–अलग पुरुष, वचन, और 10 लकारों (काल और भाव) के अनुसार परिवर्तित होकर विविध रूप लेती हैं, जिससे वाक्य बनते हैं, जैसे 'पठति' (वह पढ़ता है)। इसप्रकार की सभी धातुओं से काल और भाव के अनुसार क्रियाएं बनती हैं, जिनसे संस्कृत की वाक्य–संरचना अत्यंत समृद्ध होती है। उदाहरण–

लट् लकार (वर्तमान में):– पठति (पढ़ता है)।

लृट् लकार (सामान्य भविष्य में):– पठिष्यति (पढ़ेगा)।

लङ् लकार (अनद्यतन भूतकाल में):– अपठत् (नहीं पढ़ा/पढ़ा)।

लोट् लकार (आज्ञा में):– पठतु (पढ़े/पढ़ो)।

विधिलिङ् (चाहिए अर्थ में):– पठेत् (पढ़ना चाहिए)।

वाक्य में इसका उदाहरण (पठ् धातु से)

अहं पठामिः मैं पढ़ता हूँ (उत्तम पुरुष, एकवचन)।

त्वं पठसिः तुम पढ़ते हो (मध्यम पुरुष, एकवचन)।

सः पठतिः वह पढ़ता है (प्रथम पुरुष, एकवचन)।

पठ् धातु के समान (परस्मैपदी) रूप वाली धातुएँ हैं लिख् (लिखना), हस् (हँसना), ढ गम् (जाना), ढ चल (चलना), ढ खाद् (खाना), ढ दृश् (देखना – पश्यति रूप बनता है), ढ भू (होना – भवति), ढ कृ (करना – करोति) आदि, जो सभी भ्वादिगण की हैं और 'पठ्' की तरह ही लट् लकार (वर्तमान काल) में पठति, पठतः, पठन्ति... जैसे रूप बनाती हैं, जिनमें क्रिया के अंत में –ति, –तः, –न्ति, –सि, –थः, –थ, –मि, –वः, –मः प्रत्यय लगते हैं.

पठ् धातु के समान धातु–रूपों के उदाहरण (लट् लकार – वर्तमान काल):

ये धातुएँ 'पठ्' धातु के समान ही चलती हैं और भ्वादिगण के अंतर्गत आती हैं.

लिख् (लिखना): लिखति, लिखतः, लिखन्ति, लिखसि, लिखथः, लिखथ, लिखामि, लिखावः, लिखामः.

हस् (हँसना): हसति, हसतः, हसन्ति, हससि, हसथः, हसथ, हसामि, हसावः, हसामः.

गम् (जाना): गच्छति, गच्छतः, गच्छन्ति (यहाँ 'गम्' का 'गच्छ' हो जाता है), गच्छसि, गच्छथः, गच्छथ, गच्छामि, गच्छावः, गच्छामः.

खाद् (खाना): खादति, खादतः, खादन्ति, खादसि, खादथः, खादथ, खादामि, खादावः, खामामः.

दृश् (देखना): पश्यति, पश्यतः, पश्यन्ति (यहाँ 'दृश्' का 'पश्य' हो जाता है), पश्यसि, पश्यथः, पश्यथ, पश्यामि, पश्यावः, पश्यामः.

भू (होना): भवति, भवतः, भवन्ति, भवसि, भवथः, भवथ, भवामि, भवावः, भवामः.

कृ (करना): करोति, कुरुतः, कुर्वन्ति (यहाँ 'कृ' के रूप अलग चलते हैं), करोसि, कुरुथः, कुरुथ, करोमि, कुर्वः, कुर्मः (यह उभयपदी धातु है, परस्मैपद में ऐसे रूप).

इस प्रकार, धातुएँ संस्कृत वाक्य–निर्माण का आधार हैं, जो कर्ता के पुरुष, वचन और काल के अनुसार ढलकर अर्थ को स्पष्ट करती हैं।

अभ्यास–कार्यम्

संस्कृत में अनुवाद कीजिए–

१.	रसोइया खाना बनाता है।	पाचकः..............................पचति।
२.	अध्यापक छात्रों को पढ़ाते हैं।	शिक्षकः.........................पाठयति।
३.	विद्यालय का भवन सुन्दर है।	............................भवनं सुन्दरम् अस्ति।

४. लता संस्कृत गीत गाती है। | लता............................गायति।

५. हम सब दौड़ते हैं। | वयम्....................................... ।

६. तुम दो हंसते हो। | ....हसथः।

७. वे सब गुरु को नमस्ते करते हैं। | ....गुरुम्........................

८. आकाश में बादल गर्जते हैं। | ....मेघाः..............

९. कोयल मधुर गाती है। | पिकः... ।

१०. वृक्ष से फल गिरते हैं। | ....फलानि................. ।

2. पत्र–लेखनम्

संस्कृत भाषा में पत्र–लेखनम् दो मुख्य प्रकार से होता है – औपचारिक और अनौपचारिक जिसमें पता, दिनांक, अभिवादन (जैसे प्रिय मित्र!, माननीय महोदय!), मुख्य विषय और समापन (जैसे– भवदीयः, भावत्कः, आज्ञाकारी) का विशेष ध्यान रखा जाता है, और वाक्य–रचना सरल संस्कृत–शब्दों (अत्र कुशलं तत्रास्तु, मम अध्ययनं सम्यक् अस्ति, कृपया मम अवकाशं स्वीकुर्वन्तु) के द्वारा होती है। जैसे–

अनौपचारिकं पत्रम् (मित्र के लिए) (प्रारूपम्)

स्थानम् (जैसे– परीक्षाभवनम्)

दिनांकः (जैसे– २०२५ तमस्य वर्षस्य दिसम्बरमासस्य १५ दिनाङ्कः)

संबोधनम् (जैसे– प्रिय मित्र!, अभिन्न मित्र!, सप्रेम नमः, नमो नमः, नमस्कारः)

मुख्यः विषयः (जैसे–अत्र कुशलं तत्रास्तु। मम अध्ययनं सम्यक् चलति। फरवरीमासे मम परीक्षा भविष्यति। तत्पश्चात् अहं गृहं गमिष्यामि। भवतः स्वाध्यायः कीदृक् चलति। परीक्षायाः अनन्तरं मेलिष्यावः इत्यादि)

समापनम् (जैसे– भवदीयः सखा, भावत्कः)।

नाम (जैसे–विनोदः)

औपचारिकं पत्रम् (प्रधानाचार्य या अधिकारी के लिए) (प्रारूपम्)

प्रेषकस्य संकेतः (जैसे– दिल्लीस्थ–वेदव्यासछात्रावासत्)

दिनांकः (जैसे– २०२५ तमस्य वर्षस्य दिसम्बरमासस्य १५ दिनाङ्कः)

प्राप्तकर्ता (जैसे– प्रधानाचार्य महोदयः)

विषयः (जैसे– अवकाशार्थं प्रार्थनापत्रम्)

संबोधनम् (जैसे– महोदय / महोदया (आदरणीय महोदय / महोदया)

मुख्यः विषयः (जैसे–सविनयं निवेदनं अस्ति यत् अहम् मम पितृव्यस्य विवाहे ग्रामं गच्छामि। अस्मात् कारणात् अहं 05.01.2026 दिनांकात् 08.01.26 दिनांकं यावत् विद्यालयं आगन्तुं असमर्थः अस्मि। कृपया मम अवकाशं स्वीकुर्वन्तु)।

धन्यवाद–ज्ञापनम् (जैसे– धन्यवादः)

भवदीयः / भवदीया (भवदीयः छात्रः / भवदीया छात्रा)

प्रार्थी! / प्रेषकः (जैसे– विनोदः कक्षा अष्टमी 'ब')

अभ्यासः–प्रधानाचार्य महोदय को अवकाश के सम्बन्ध में पत्र में खाली स्थान भरिए–

सेवायाम्

श्रीमान्.......................................

(विद्यालय का पता)..

विषयः–

महोदय!

सविनयं निवेदनं अस्ति यत् अहम्..। अस्मात् कारणात् अहं दिनांकात्.........................दिनांकं................................ यावत् विद्यालयं आगन्तुं असमर्थः अस्मि।

अतः प्रार्थना अस्ति यत् मह्यं ....दिनानां अवकाशं दत्वा उपकुर्वन्तु।

धन्यवादः

भवतां छात्रः / छात्रा

(हस्ताक्षराणि).......................................

....

कक्षा............वर्गः....

3. चित्र–वर्णनम्

किसी चित्र को देखकर उसमें दिखाई देने वाली वस्तुओं, दृश्यों, क्रियाओं और भावों को अपने शब्दों में व्यवस्थित ढंग से अभिव्यक्त करना, जिससे छात्र उस चित्र की कल्पना कर सके; इसमें चित्र की वस्तुओं, दृश्यों, क्रियाओं, बारीकियों, रंगों और भावनाओं को सरल भाषा में बताना होता है। जैसे कि–

1. ऊपर दिये गये चित्र को देख कर खाली स्थान भरिए–

(क) उपवने...........................भ्रमन्ति (अश्वाः, गजाः बालाः, मेघाः)
(ख) ....कमलानि सन्ति (पर्वते, पाषाणे, सरोवरे, भवने)
(ग) वृक्षेषु.....................सन्ति। (मित्राणि, पुस्तकानि, पुष्पाणि, नेत्राणि)
(घ) उपवने एकः.................अपि अस्ति। (गृहम्, वाहनम्, मार्गः, विद्यालयः)
(ङ) त्रयः बालकाः सन्ति एका ....च अस्ति। (अजा, लेखनी, बालिका, नदी)
(च) वृक्षे एका ....अपि अस्ति। (बालिका, घटिका, धेनुः चटका, पिपीलिका)

अभ्यासः

1. नीचे दिये गये चित्र को देख कर कोष्ठक में दिये गये शब्दों से संस्कृत में वाक्य बनाइए–

(क)
(ख)

(ग)
(घ)
(ङ)

पठन्ति, विद्यालये, नमति, आचार्यः, वृक्षः, मयूरः, छात्राः, घटः, आसने, उपविष्टाः, सन्ति, पाठयति

4.कथावबोधनम्

कथा–अवबोधनम् का अर्थ है, कहानी को समझना या उसकी समझ विकसित करना। यह केवल कहानी पढ़ने या सुनने तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें कहानी के भीतर के अर्थ, घटनाओं के क्रम और पात्रों के उद्देश्यों को गहराई से समझना भी सम्मिलित है।

इसमें सम्मिलित मुख्य तत्त्व निम्नलिखित हैंः–

कथानकः कहानी में होने वाली घटनाओं का क्रम।

पात्रः कहानी के पात्र और उनके व्यक्तित्व।

परिवेशः कहानी का स्थान और समय।

विषय / उद्देश्यः कहानी का मुख्य विचार या नैतिक शिक्षा।

शैलीः कहानी कहने की शैली और भाषा का प्रयोग।

आइए कथावबोधनम् को समझने के लिए निम्नलिखित अभ्यास करते हैं।

(क) निम्नलिखित कहानी के गद्यांश में खाली स्थान भरिए–

पुरा एकस्मिन् राज्ये कश्चन (क)............. आसीत्। तस्य प्रसादे एकः वानरः आसीत्। सः वानरः महाराजस्य अतीव (ख)....... .... अनुचरः आसीत्। एकदा महाराजः अन्तःपुरे (ग).... .. .. कुर्वन् आसीत्। तदा वानरः तत्र आगतवान्। सः निन्द्रागतस्य महाराजस्य समीपं गत्वा (घ)............. वीजनं आरब्धवान्। अत्रान्तरे महाराजस्य वक्षःस्थले एका (ङ).............. उपविष्टा। वानरः व्यजनेन तां दूरीकर्तुं पुनः पुनः प्रयासः (च)............. । तथापि मक्षिका ततः दूरं न गता । तत्रैव शरीरे उड्डीय पुनः आगच्छति स्म। तदा सः (छ)............... मूर्खः वानरः कुपितः सन् तीक्ष्णं (ज)................ गृहीत्वा तस्याः उपरि प्रहारं कृतवान्। मक्षिका उड्डीय ततः गता। खड्गप्रहारेण महाराजस्य (ञ)............... विदीर्णं जातम्। तेन महाराजः (ट).............. अभवत्।

मञ्जूषा

निद्रां, मृतः, स्वभावचपलः, व्यजनेन, महाराजः, खड्गं, कृतवान्, वक्षःस्थलं, मक्षिका, विश्वासपात्रम्

(ख) निम्नलिखित कहानी के गद्यांश में खाली स्थान भरिए–

एकस्याः नद्याः तटे एकः विशालवृक्षः आसीत्। तस्मिन् वृक्षे स्वपरिश्रमेण (क)........... निर्माय अनेके खगाः निवसन्ति स्म। (ख) ...... एकः वानरः अपि वसति स्म। एकदा महती (ग) .... अभवत्। सः वानरः (घ)............ अतीव आर्द्रः कम्पितः च अभवत्। खगाः (ङ).............. कम्पमानम् वानरम् अवदन्–भो वानर। त्वम् कष्टम् (च) ....। तत् कथम् गृहस्य (छ)....... .... न करोषि। यदा सः कपिः एतत् अश्रृणोत् तदा सः अचिन्तयत् यत् एते (ज)............ खगाः मां निन्दन्ति। अतः सः वानरः खगानाम् नीडानि वृक्षात् (झ)............... अपातयत्। खगानां नीडैः सह तेषाम् अण्डानि अपि (ञ).............। सत्यमेव उक्तं केनचित् दुष्टः परामर्शयोग्यः न भवति।

मञ्जूषा

नीडानि, अनुभवसि, अधः, शीतेन, निर्माणम्, क्षुद्राः वृक्षतले, वृष्टिः, नष्टानि, वृष्टिजलेन।

2.व्याकरणम्

(क) सन्धिः

दो वर्णों या अक्षरों के मेल या अतिशय सामीप्य के कारण होने वाले विकार या परिवर्तन को 'सन्धि' कहते हैं।

मुख्य रूप से सन्धि तीन प्रकार की होती हैं–

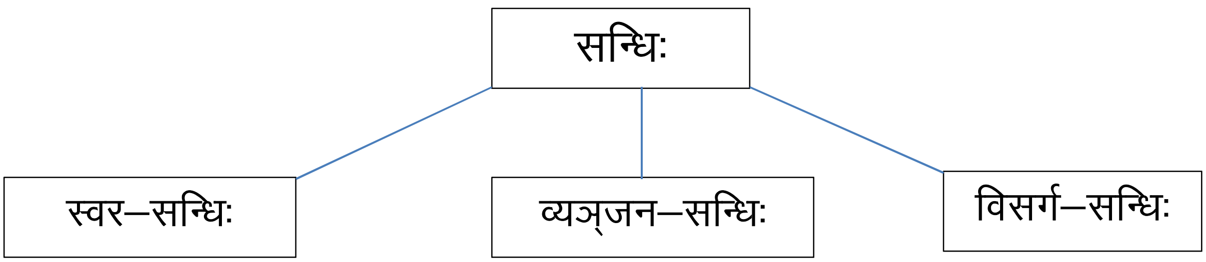

स्वरसन्धिः – जहां दो स्वरों के मेल से परिवर्तन होता है उसे स्वर सन्धि कहते हैं।
महा+उदयः महोदय; भवति+इति भवतीति।
व्यञ्जन–सन्धिः जहां व्यंजनों में अत्यधिक समीपता के कारण परिवर्तन होता है, उसे व्यञ्जन सन्धि कहते हैं।
जगत् + ईशः = जगदीशः
तत्+मयः = तन्मयः
विसर्ग–सन्धिः – जहां वर्णों की अत्यधिक समीपता के कारण विसर्ग (:) में परिवर्तन होता है, उसे विसर्ग सन्धि कहते हैं।
कः+अपि = कोऽपि
नमः + ते नमस्ते
इस पाठ में हम केवल स्वर–सन्धि और व्यञ्जन सन्धि का अध्ययन कर रहे हैं।

(क) स्वरसन्धिः

1.दीर्घसन्धिः–

आ: अ + अ, आ + आ, अ + आ, आ + अ	सुख+अर्थः = सुखार्थः चिकित्सा + आलयः = चिकित्सालयः प्रधान + आचार्यः = प्रधानाचार्यः विद्या+ अर्थी = विद्यार्थी
ई: ई + ई, इ + ई	रवि इन्द्रः = रवीन्द्रः श्री+ईशः = श्रीशः

ई + इ ई + इ	मुनि + ईश्वरः = मुनीश्वरः महती+इच्छा = महतीच्छा
ऊ उ + उ ऊ + ऊ उ + ऊ ऊ + उ	गुरु + उपदेशः = गुरूपदेशः भू + ऊर्ध्वम् = भूर्ध्वम् लघु + ऊर्मिः = लघूर्मिः वधू + उत्सवः = वधूत्सवः
ॠ ऋ + ऋ ॠ + ॠ ऋ + ॠ ॠ + ऋ	पितृ + ऋणम् = पितृणम् मातृ + ऋणम् = मातृणम् होतृ + ऋकारः = होतृकारः

नियम
जब अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ इन वर्णों के बाद क्रमशः उसी का सवर्ण वर्ण अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ आता है तो दोनों के स्थान पर क्रमशः दीर्घ आ, ई, ऊ, ॠ एकादेश हो जाता है।

2.गुणसन्धिः

ए अ + इ अ + ई आ + इ आ + ई	जित + इन्द्रः = जितेन्द्रियः सुर + ईशः = सुरेशः महा + इन्द्रः = महेन्द्रः कमला + ईशः = कमलेशः
ओ अ + उ अ + ऊ आ + उ आ + ऊ	सूर्य + उदयः = सूर्योदयः महा + उदयः = महोदयः महा + ऊर्मिः = महोर्मिः

अर् : अ + ऋ, अ + ॠ, आ + ऋ, आ + ॠ	ग्रीष्म + ऋतुः = ग्रीष्मर्तुः महर्षिः = महा + ऋषिः
अल् : अ + लृ, आ + लृ	तवल्कारः = तव +लृकारः

नियम

यदि अ/आ के बाद इ/ई रहे तो दोनों को मिलकर 'ए' हो जाता है।
यदि अ/आ के बाद उ/ऊ रहे तो दोनों को मिलकर 'ओ' हो जाता है।
यदि अ/आ के बाद ऋ/ॠ रहे तो दोनों को मिलकर 'अर्' हो जाता है।
यदि अ/आ के बाद लृ रहे तो दोनों को मिलकर 'अल्' हो जाता है।

3.वृद्धि–सन्धिः

ऐ : अ + ए, अ + ऐ, आ + ए, आ + ऐ	एक + एकः = एकैकः तव + एव =तवैव मत + ऐक्यम् = मतैक्यम् राम + ऐश्वर्यम् = रामैश्वर्यम्
औ : अ + ओ, अ +औ, आ + ओ, आ + औ	जल + ओघः = जलौघः वन + औषधिः = वनौषधिः महा + ओजस्वी = महौजस्वी

नियम
यह संधि स्वरों में वृद्धि (बड़ा रूप) करती है, इसलिए इसे वृद्धि संधि कहते हैं। संस्कृत में वृद्धि संधि का सूत्र 'वृद्धिरेचि' है, और इसका मुख्य नियम है कि 'अ' या 'आ' के बाद 'ए' या 'ऐ' आने पर 'ऐ' और 'अ' या 'आ' के बाद 'ओ' या 'औ' आने पर 'औ' हो जाता है, यानी स्वर का 'विकास' या 'वृद्धि' होती है; जैसे 'एक + एक' मिलकर 'एकैकः' बनता है। अ/आ + ए/ऐ = ऐ (जैसेः– राम + ऐश्वर्यम् = रामैश्वर्यम्) अ/आ + ओ/औ = औ (जैसेः जल + ओघः = जलौघः, महा + ओजस्व' = महौजस्वी)

(ख) व्यञ्जन–सन्धिः

जहां व्यन्जनों में अत्यधिक समीपता के कारण परिवर्तन होता है, उसे व्यन्जन सन्धि कहते हैं।

1. श्चुत्व–सन्धिः

यदि स् तथा तवर्ग के पूर्व या पर में श् या चवर्ग में से कोई वर्ण आए तो क्रमशः तवर्ग को चवर्ग और स् का श् हो जाता है।

उदाहरणम्–

रामस् + चिनोति = रामश्चिनोति

तत् + च = तच्च

सत् + चरित्रम् = सच्चरित्रम्

उत्+ ज्वलः = उज्ज्वलः

सत् + जनः सज्जनः

श्रीमान् + जयति = श्रीमाञ्जयति

2. जश्त्व–सन्धिः

यदि पहले शब्द के अन्त में वर्ग का पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा और ष् अक्षर हों और बाद में वर्ग का तीसरा, चौथा, स्वर और य्, र्, ल्, व्, ह् हों तो पहले शब्द का अन्तिम अक्षर बदलकर अपने वर्ग का तीसरा अक्षर हो जाता है और ष् बदलकर श् हो जाता है।

क् ख् ग् घ् च् छ् ज् झ् ट् ठ् ड् ढ्		ग् घ् ज् झ द् ध् ब् भ् स्वर		ग् ज् ड्

त् थ् द् ध् प् फ् ब् भ् ष्	+	य् र् ल् व् ह्	=	द् ब् श्

उदाहरणम् –

वाक् + ईशः = वागीशः

अच् + अन्तः = अजन्तः

षट् + आननम् = षडाननम्

जगत् + ईशः = जगदीशः

वाक् + अर्थः = वागर्थः

सत् + आचारः = सदाचारः

सुप् + अन्तः = सुबन्तः

वाक् + दानम् वाग्दानम्

(ख) प्रत्ययाः

किसी शब्द अथवा धातु (क्रिया) के पश्चात् जुड़कर उनके अर्थों में परिवर्तन लाने वाले या उनके अर्थों में विशिष्टता लाने वाले शब्दांशों को प्रत्यय कहते हैं।
संस्कृत में मूलतः पाँच प्रकार के प्रत्यय होते हैं– सुप्, तिङ्, कृत्, तद्धित और स्त्री।

प्रत्यय

सुप् | तिङ् | कृत् | तद्धित | स्त्री

सुप्– मूल शब्द में जुड़ने वाले वे प्रत्यय जिनके योग से शब्दरूप बनते हैं; जैसे– सु. औ. जस्।

बालकः बालकौ बालकाः

तिङ् – मूल धातु में जुड़ने वाले वे प्रत्यय जिन्हें धातुरूप में देखा जाता है; जैसे–

अति अतः अन्ति

पठति पठतः पठन्ति

कृत् – धातुओं से संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण तथा अव्यय बनाने के लिए कृत् प्रत्यय का प्रयोग होता है; जैसे क्त्वा, तुमुन्, ल्यप्, क्त, क्तवतु, तव्यत्, अनीयर्, शतृ, शानच् आदि।
तद्धित – संज्ञा, सर्वनाम आदि में जुड़ने वाले प्रत्यय; जैसे मतुप्, ठक्, णिनि, त्व, तल् आदि।
स्त्री – पुल्लिग शब्दों को स्त्रीलिंग में बदलने के लिए प्रयुक्त होने वाले प्रत्यय; जैसे– टाप्, ङीप् आदि।

यहाँ हम धातुओं में जुड़ने वाले कुछ प्रमुख प्रत्ययों (क्त्वा, ल्यप् और तुमुन्, उनको जोड़ने से होने वाले परिवर्तनों तथा उनके वाक्य में प्रयोग पर दृष्टि डालेंगे–

1. **क्त्वा–प्रत्ययः**

जिस वाक्य में एक कर्ता के द्वारा दो क्रियाएँ की जाती हैं, वहाँ पूर्वकाल अर्थात् पहले की जाने वाली क्रियाओं के साथ 'क्त्वा' प्रत्यय जुड़ता है। 'क्त्वा' प्रत्यय में 'क्' का लोप हो जाता है और 'त्वा' शेष बच जाता है। जैसे– छात्रः क्रीडित्वा आगच्छति ।

इस वाक्य में दो क्रियाएँ हैं– क्रीड् (खेलना) और आ + गम् (आना)

यहाँ 'क्रीड्' पूर्वकालिक क्रिया है और 'आगम्' परकालिक। इसलिए 'क्रीड्' में 'क्त्वा' प्रत्यय जुड़ा है।

- कुछ धातुओं में धातु और प्रत्यय के बीच में 'इ' लगता है; जैसे–

√पठ् + (इ) + त्वा = पठित्वा – पढ़कर	√खाद् + (इ) + त्वा = खादित्वा – खाकर
√हस् + (इ) + त्वा = हसित्वा – हँसकर	√क्रीड् + (इ) + त्वा = क्रीडित्वा – खेलकर
√खेल + (इ) + त्वा = खेलित्वा – खेलकर	√धाव् + (इ) + त्वा = धावित्वा – दौड़कर
√स्था + (इ) + त्वा = स्थित्वा – ठहरकर	√गृह् + (इ) + त्वा = गृहीत्वा – ग्रहण करके
√चल् + (इ) + त्वा = चलित्वा – चलकर	√लिख् + (इ) + त्वा = लिखित्वा – लिखकर
√पी + (इ) + त्वा = पीत्वा – पीकर	√कथ् + (इ) + त्वा = कथयित्वा – कहकर
√मिल् + (इ) + त्वा = मिलित्वा – मिलकर	√वद् + (इ) + त्वा = उदित्वा – कहकर
√पत् + (इ) + त्वा = पतित्वा – गिरकर	√नी + (इ) + त्वा = नीत्वा – ले जाकर

- कुछ धातुओं में 'इ' नहीं लगता है; जैसे–

√श्रु + त्वा = श्रुत्वा – सुनकर	√ध्या + त्वा = ध्यात्वा – ध्यान करके
√भू + त्वा = भूत्वा – होकर	√त्यज् + त्वा = त्यक्त्वा – छोड़कर
√कृ + त्वा = कृत्वा – करके	√स्मृ + त्वा = स्मृत्वा – यादकर
√दा + त्वा = दत्वा – देकर	√दृश् + त्वा = दृष्ट्वा – देखकर

- 'म्' में अंत होने वाली धातुओं में 'म्' का लोप हो जाता है; जैसे–

√गम् + त्वा = गत्वा – जाकर	√नम् + त्वा = नत्वा – नमस्कार करके

दो वाक्यों को जोड़ने के लिए पहले वाक्य की क्रिया में हम क्त्वा प्रत्यय लगाकर प्रयोग करते हैं। जैसे–

1. बालकः पठति। बालकः क्रीडति । बालकः पठित्वा क्रीडति ।

2. महिला ईश्वरं नमति । सा तं स्मरति। महिला ईश्वरं नत्वा तं स्मरति ।

3. राघवः कवितां स्मरति। सः प्रसन्नः भवति। राघवः कवितां स्मृत्वा प्रसन्नः भवति।

4. युवां चलचित्रं पश्यथः। युवां प्रसन्नौ स्थः । युवां चलचित्रं दृष्ट्वा प्रसन्नौ स्थः।

5. मोहनः हसति। सः क्रीडति । मोहनः हसित्वा क्रीडति ।

2. ल्यप् प्रत्ययः

वाक्य में दो क्रियाओं के रहने पर पूर्वकाल अर्थात् पहले की जाने वाली क्रिया के पूर्व यदि उपसर्ग हो, तो 'क्त्वा' प्रत्यय का प्रयोग नहीं होता, 'ल्यप्' का प्रयोग होता है। 'ल्यप्' प्रत्यय का 'य' शेष बचता है।

आ +√दा + ल्यप् = आदाय – लेकर	सु +√पच् + ल्यप् = सुपच्य – पकाकर
प्र + √नम् + ल्यप् = प्रणम्य – नमस्कार करके	
वि + √स्मृ + ल्यप् = विस्मृत्य – भूलकर	नि + √वर्त् + ल्यप् = निवृत्य – निवृत्य होकर
उप + √हस् + ल्यप् =उपहस्य– उपहास करके	वि √श्रम् + ल्यप् = विश्रम्य – विश्राम करके
उत् + √स्था + ल्यप् = उत्थाय – उठकर	परि + √त्यज् + ल्यप् = परित्यज्य – छोड़कर
अनु + √गम् + ल्यप् = अनुगम्य – पीछे जाकर	परि + √इक्ष + ल्यप् = परीक्ष्य – परीक्षा करके
आ + √कर्ण + ल्यप् = आकर्ण्य – सुनकर	प्र + √आप् + ल्यप् = प्राप्य – प्राप्त करके
अनु + √भू + ल्यप् = अनुभूय – अनुभव करके	उप + √कृ + ल्यप् = उपकृत्य– उपकार करके
वि+√ज्ञा + ल्यप् = विज्ञाय – जानकर	

'ल्यप्' प्रत्ययान्त पदों का वाक्य–प्रयोग–

1. बालकः गृहम् आगत्य पठति ।

2. अनुरागः विहस्य प्रश्नं पृच्छति ।

3. छात्राः गुरुं प्रणम्य उपदिशन्ति ।

4. पिता पुत्राय मिष्टान्नं प्रदाय वदति ।

3. तुमुन्–प्रत्ययः

जब एक क्रिया दूसरी क्रिया के लिए की जाती है तो उस क्रिया को क्रियार्था क्रिया कहते हैं। उसमें तुमुन् प्रत्यय लगता है। 'तुमुन्' प्रत्यय में 'तुम्' शेष बचता है। 'तुमुन्' प्रत्यय का प्रयोग "के लिए" अर्थ में होता है।

जैसे "जनाः भ्रमितुम् उद्यानं गच्छन्ति" यहाँ पहली क्रिया "भ्रमितुम्" के लिए "गच्छन्ति" क्रिया की जा रही है। इसलिए वह क्रियार्था क्रिया है और उसमें 'तुमुन्' प्रत्यय का प्रयोग हुआ है।

कुछ धातुओं और प्रत्ययों के बीच 'इ' का प्रयोग होता है; जैसे–

√पठ् + (इ) + तुम् = पठितुम् – पढ़ने के लिए

√हस् + (इ) – हसितुम = हँसने के लिए

√धाव् + (इ) – धावितुम् = दौड़ने के लिए

√सेव् + (इ) – सेवितुम् = सेवा करने के लिए

√याच् + (इ) – याचितुम् = मांगने के लिए

√लिख + (इ) – लेखितुम् = लिखने के लिए

√गृह + (इ) – ग्रहीतुम् = पकड़ने के लिए

√अस् + (भू) + (इ) – भवितुम् = होने के लिए

√रक्ष + (इ) + तुम् – रक्षितुम् = रक्षा करने के लिए

√पत् + (इ) – पतितुम् = गिरने के लिए

√क्रीड् + (इ) – क्रीडितुम् = खेलने के लिए

√भ्रम् + (इ) – भ्रमितुम् = घूमने के लिए

√वद् + (इ) – वदितुम् = बोलने के लिए

√चुर् + (इ) – चोरयितुम् = चुराने के लिए

√कथ् + (इ) – कथयितुम् = कहने के लिए

√रच् + (इ) – रचयितुम् = रचने के लिए

- धातु के प्रारम्भ के इ को ए, उ का ओ, ऋ का र् तथा म् का न् हो जाता है; जैसे–

√नी – नेतुम् = ले जाने के लिए

√जि – जेतुम् = जीतने के लिए

√श्रु – श्रोतुम् = सुनने के लिए

√कृ – कर्तुम् = करने के लिए

√प्रच्छ – प्रष्टुम् = पूछने के लिए

√स्मृ – स्मर्तुम् = स्मरण करने के लिए

√गम् – गन्तुम् = जाने के लिए

(ग) विभक्ति–प्रयोगः

कारक–विभक्तिः

"क्रियान्वयित्वं कारकत्वम्" क्रिया का अनुगमन करने वाले कारक कहलाते हैं। अर्थात् जिनका क्रिया से संबंध होता है। जैसे–बालकः पठति।

'बालकः' पद का 'पठति' क्रिया के साथ संबंध है। अतः बालकः पद कारक है।

संस्कृत में छः कारक होते हैं। कारकों को प्रकट करने के लिए जिन चिह्नों या प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है, वे विभक्ति कहलाते हैं। विभक्तियाँ सात होती हैं। कारक को प्रकट करने के लिए संबोधन में एकवचन को छोड़कर शेष प्रथमा विभक्ति जैसा ही रूप होता है। कारक की विभक्तियाँ एवं उनके चिह्न निम्नलिखित हैं–

विभक्तिः	कारकः	चिह्नम्
प्रथमा	कर्ता (Nominative case)	ने/0
द्वितीया	कर्म (Accusative case)	को/0
तृतीया	करण (Instrumental case)	से/के द्वारा
चतुर्थी	संप्रदान (Dative case)	के लिए
प्ंचमी	अपादान (Ablative case)	से पृथक् (अलगाव) अर्थ में
षष्ठी	संबंध (Genitive case)	का/की/के/रा/री/रे
सप्तमी	अधिकरण (Locative case)	में/ऊपर/पर
––	संबोधन (Vocative case)	हे/अरे/भो

1. कर्ता कारक–

क्रिया को करने वाला कारक कर्ता होता है। कर्ता में प्रथमा विभक्ति का प्रयोग होता है; जैसे–

बालकः पठति।

बालकौ पठतः ।

बालकाः पठन्ति ।

संस्कृत में तीन पुरुष–प्रथम पुरुष, मध्यम पुरुष और उत्तम पुरुष होते हैं। अतः कर्ता के पुरुषों के अनुसार क्रिया का प्रयोग करना चाहिए।

पुरुषः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	सैनिकः देशं रक्षति।	सैनिकौ भ्रमतः।	सैनिकाः भ्रमन्ति।
	सः देशं रक्षति।	तौ भ्रमतः।	ते भ्रमन्ति।
	महिला पचति।	महिले पचतः।	महिलाः पचन्ति।
	सा पचति।	ते पचतः	ताः पचन्ति।
मध्यमपुरुषः	त्वं पठसि।	युवां पठथः।	यूयं पठथ।
उत्तमपुरुषः	अहं गच्छामि।	आवां गच्छावः।	वयं गच्छामः।

2. कर्म कारक– कर्ता जिस अभीष्ट फल की प्राप्ति के लिए क्रिया करता है उसे कर्म कारक कहते हैं। कर्म कारकं में द्वितीया विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे–

छात्रः पुस्तकं पठति ।

वानरः फलानि खादति ।

बालिकाः लेखान् लिखन्ति ।

इन वाक्यों में '**पुस्तकं**, **फलानि** तथा **लेखान्** कर्म कारक हैं क्योंकि इन पर क्रिया का प्रभाव पड़ रहा है। अतः इनमें द्वितीया विभक्ति का प्रयोग हुआ है।

3. करण कारक– कर्ता जिस साधन के द्वारा क्रिया करता है (अर्थात् जो क्रिया करने में सबसे ज्यादा सहायक होती है।) वह करण कारक कहलाता है; जैसे–

रामः चषकेण जलं पिबति ।

वृद्धः दण्डेन चलति ।

आचार्यः सुधाखण्डेन लिखति ।

इन वाक्यों में चषकेण, दण्डेन तथा सुधाखण्डेन में करण कारक हैं। क्योंकि इनके द्वारा क्रिया की जा रही है। अतः इनमें तृतीया विभक्ति हुई है।

4. सम्प्रदान कारक– जिसके लिए क्रिया की जाती है. उसे सम्प्रदान कारक कहते हैं। उसमें चतुर्थी विभक्ति होती है। जैसे–

सः पुत्राय फलं यच्छति ।

बालकः क्रीडनकाय क्रन्दति ।

छात्राः पठनाय विद्यालयं गच्छन्ति ।

इन वाक्यों में '**पुत्राय**, **क्रीडनकाय** तथा **पठनाय**' सम्प्रदान कारक हैं, क्योंकि इनके लिए क्रिया की जा रही है। अतः इन पदों में चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग हुआ है।

5. अपादान कारक– जिस पद से अलग (पृथक्) होने का पता चले, उसे अपादान कारक कहते हैं। उसमें पंचमी विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे–

छात्राः विद्यालयात् आगच्छन्ति।

अहं कूपात् जलम् आनयामि।

हस्तात् कलमं पतति।

इन वाक्यों में **विद्यालयात्**, **कूपात्** तथा हस्तात् अपादान कारक हैं, क्योंकि इनसे अलग होने का भाव प्रकट हो रहा है। अतः इन पदों में पंचमी विभक्ति का प्रयोग हुआ है।

6. सम्बन्ध कारक– जिन पदों से किसी व्यक्ति या वस्तु का दूसरे से संबंध होता है, उसे सम्बन्ध कारक कहते हैं। उसमें षष्ठी विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे–

रामस्य भ्राता लक्ष्मणः अस्ति।

एतत् देवस्य कलमम् अस्ति ।

मम देशस्य नाम भारतम् अस्ति ।

इन वाक्यों में **रामस्य**, **देवस्य** तथा **देशस्य** का अन्य पदों के साथ सम्बन्ध हैं। अतः इन पदों में षष्ठी विभक्ति का प्रयोग हुआ है।

7. अधिकरणकारक– जिस पद के माध्यम से क्रिया के आधार को व्यक्त किया जाता है उसे अधिकरण कारक कहते हैं। इसमें सप्तमी विभक्ति का प्रयोग किया जाता है; जैसे–

जलं घटे अस्ति।

जनाः गृहे वसन्ति।

कमलानि सरोवरे विकसन्ति।

इन वाक्यों में **घटे**, **गृहे** तथा **सरोवरे** पद क्रिया के आधार है। अतः इन पदों में सप्तमी विभक्ति का प्रयोग हुआ है।

8. **सम्बोधन**– किसी को बुलाने, सम्बोधित करने या पुकारने के लिए जिन शब्दों का प्रयोग होता है उन्हें सम्बोधन कहते हैं; जैसे–

हे कृष्ण! त्वं कुत्र गच्छसि?

हे बालिके! भवत्याः नाम किम् अस्ति?

हे छात्राः! वयं भारतीयाः स्मः।

(घ) शब्दरूपाणि

मूल रूप में शब्दों को प्रातिपदिक कहते हैं। वाक्य में प्रयोग करने के लिए प्रातिपदिक शब्दों के रूप चलते हैं, तभी वे 'पद' बनते हैं और वाक्य में प्रयुक्त होते हैं।

संस्कृत वर्णमाला स्वर और व्यञ्जन दो भागों में विभक्त है, अतः शब्द भी स्वरान्त (अजन्त) और व्यञ्जनान्त (हलन्त) होते हैं।

स्वरान्त जिन शब्दों के अंत में स्वर आते हैं, उन्हें हम स्वरान्त कहते हैं। जिस स्वर से शब्द का अन्त होता है, उसी के अनुरूप का उसका नाम होता है। जैसे राम शब्द के अंत में "अ" है तो उसे अकारान्त कहते हैं। इसी प्रकार–

'**आ**' से अन्त होने वाले आकारान्त

'**इ**' से अन्त होने वाले इकारान्त

'**ई**' से अन्त होने वाले ईकारान्त

'**उ**' से अन्त होने वाले उकारान्त

'**ऊ**' से अन्त होने वाले ऊकारान्त

'**ऋ**' से अन्त होने वाले ऋकारान्त

यहां हम केवल स्वरान्त शब्दों के विषय में जानेंगे। स्वरान्त शब्दों के भी तीन भेद होते हैं

पुंल्लिग स्वरान्त शब्द जैसे– बालः

स्त्रीलिंग स्वरान्त शब्द जैसे–लता

नपुंसकलिंग स्वरान्त शब्द जैसे– फलम्

अकारान्त–पुंल्लिंग–शब्दाः
बालक

विभक्तिः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	बालकः	बालकौ	बालकाः
द्वितीया	बालकम्	बालकौ	बालकान्
तृतीया	बालकेन्	बालकाभ्याम्	बालकैः
चतुर्थी	बालकाय	बालकाभ्याम्	बालकेभ्यः
पंचमी	बालकात्	बालकाभ्याम्	बालकेभ्यः
षष्ठी	बालकस्य	बालकयोः	बालकानाम्
सप्तमी	बालके	बालकयोः	बालकेषु
सम्बोधन	हे बालक!	हे बालकौ!	हे बालकाः!

राम			
विभक्तिः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	रामः	रामौ	रामाः
द्वितीया	रामम्	रामौ	रामान्
तृतीया	रामेण	रामाभ्याम्	रामैः
चतुर्थी	रामाय	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
पंचमी	रामात्	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
षष्ठी	रामस्य	रामयोः	रामाणाम्
सप्तमी	रामे	रामयोः	रामेषु
सम्बोधन	हे राम!	हे रामौ!	हे रामाः!

देव, छात्र, जनक, पुत्र, सूर्य, वानर आदि अकारान्त पुंल्गि शब्दों के रूप इसी तरह चलेंगे।

इकारान्त पुंल्लिग–शब्दाः

(हरि (विष्णु)			
विभक्तिः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	हरिः	हरी	हरयः
द्वितीया	हरिम्	हरी	हरीन्
तृतीया	हरिणा	हरिभ्याम्	हरिभिः
चतुर्थी	हरये	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
पंचमी	हरेः	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
षष्ठी	हरेः	हर्योः	हरीणाम्
सप्तमी	हरौ	हर्योः	हरिषु
सम्बोधन	हे हरे!	हे हरी!	हे हरयः!

रवि (सूर्य)			
विभक्तिः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	रविः	रवी	रवयः
द्वितीया	रविम्	रवी	रवीन्
तृतीया	रविणा	रविभ्याम्	रविभिः
चतुर्थी	रवये	रविभ्याम्	रविभ्यः
पंचमी	रवेः	रविभ्याम्	रविभ्यः
षष्ठी	रवेः	रव्योः	रवीणाम्
सप्तमी	रवौ	रव्योः	रविषु
सम्बोधन	हे रवे!	हे रवी!	हे रवयः!

कवि, मुनि, यति, भूपति, अग्नि, गिरि आदि इकारान्त पुंल्लिग शब्दों के रूप इसी तरह चलेंगे।

आकारान्त–स्त्रीलिंग–शब्द–रूपाणि

(बालिका)			
विभक्तिः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	बालिका	बालिके	बालिकाः
द्वितीया	बालिकाम्	बालिके	बालिकाः
तृतीया	बालिकया	बालिकाभ्याम्	बालिकाभिः
चतुर्थी	बालिकायै	बालिकाभ्याम्	बालिकाभ्यः
पंचमी	बालिकायाः	बालिकाभ्याम्	बालिकाभ्यः
षष्ठी	बालिकायाः	बलिकयोः	बालिकानाम्
सप्तमी	बालिकायाम्	बालिकयोः	बलिकासु
सम्बोधन	हे बालिके!	हे बालिके!	हे बालिकाः!

(रमा (लक्ष्मी)			
विभक्तिः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	रमा	रमे	रमाः
द्वितीया	रमाम्	रमे	रमाः
तृतीया	रमया	रमाभ्याम्	रमाभिः
चतुर्थी	रमायै	रमाभ्याम्	रमाभ्यः
पंचमी	रमायाः	रमाभ्याम्	रमाभ्यः
षष्ठी	रमायाः	रमयोः	रमाणाम्
सप्तमी	रमायाम्	रमयोः	रमासु
सम्बोधन	हे रमे!	हे रमे!	हे रमाः!

इकारान्त–स्त्रीलिंग–शब्दः

(मति)			
विभक्तिः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	मतिः	मती	मतयः
द्वितीया	मतिम्	मती	मतीः
तृतीया	मत्या	मतिभ्याम्	मतिभिः
चतुर्थी	मत्यै / मतये	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
पंचमी	मत्याः / मतेः	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
षष्ठी	मत्याः / मतेः	मत्योः	मतीनाम्
सप्तमी	मत्याम् / मतौ	मत्योः	मतिषु
सम्बोधन	हे मते!	हे मती!	हे मतयः!

अकारान्त–नपुंसकलिंग–शब्दः

पुस्तक (किताब)			
विभक्तिः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	पुस्तकम्	पुस्तके	पुस्तकानि
द्वितीया	पुस्तकम्	पुस्तके	पुस्तकानि
तृतीया	पुस्तकेन	पुस्तकाभ्याम्	पुस्तकैः
चतुर्थी	पुस्तकाय	पुस्तकाभ्याम्	पुस्तकेभ्यः
पंचमी	पुस्तकात्	पुस्तकाभ्याम्	पुस्तकेभ्यः
षष्ठी	पुस्तकस्य	पुस्तकयोः	पुस्तकानाम्
सप्तमी	पुस्तके	पुस्तकयोः	पुस्तकेषु
सम्बोधन	हे पुस्तक!	हे पुस्तके!	हे पुस्तकानि!

फल			
विभक्तिः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	फलम्	फले	फलानि
द्वितीया	फलम्	फले	फलानि
तृतीया	फलेन	फलाभ्याम्	फलैः
चतुर्थी	फलाय	फलाभ्याम्	फलेभ्यः
पंचमी	फलात्	फलाभ्याम्	फलेभ्यः

षष्ठी	फलस्य	फलयोः	फलानाम्
सप्तमी	फले	फलयोः	फलेषु
सम्बोधन	हे फल!	हे फले!	हे फलनि!

सर्वनाम शब्दरूप

युष्मद् (सर्वनाम–शब्दः)				अस्मद् (सर्वनाम–शब्दः)		
विभक्तिः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	त्वम्	युवाम्	यूयम्	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वितीया	त्वाम्	युवाम्	युष्मान्	माम्	आवाम्	अस्मान्
तृतीया	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
चतुर्थी	तुभ्यम्	युवाभ्याम्	युष्मभ्यम्	मह्यम्	आवाभ्याम्	अस्मभ्यम्
पंचमी	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
षष्ठी	तव	युवयोः	युष्माकम्	मम	आवयोः	अस्माकम्
सप्तमी	त्वयि	युवयोः	युष्मासु	मयि	आवयोः	अस्मासु

सर्वनाम में सम्बोधन का प्रयोग नहीं होता है।

(ङ) धातुरूपाणि

किसी भी भाषा की संरचना में वाक्य के निर्माण के लिए दो पदों का होना अत्यंत आवश्यक होता है – कर्ता और क्रियापद।

जैसे– बालकः पठति। (बालक पढता है।)

त्वं खादसि। (वह जाता है।)

अहं गच्छामि। (मैं हँसता हूँ।)

उपर्युक्त रंगीन पद किसी न किसी काम के होने या करने का बोध करा रहे हैं। ये सभी क्रिया शब्द हैं।

क्रिया– जिन शब्दों से किसी काम के करने या होने का पता चलता है. उन्हें क्रिया कहते हैं।

क्रिया के मूल रूप को धातु कहते हैं। जैसे ऊपर के वाक्यों में पठ्, खाद् और गम् (गच्छ) धातुएँ हैं।

धातु से क्रियापद बनाने के लिए प्रत्यय लगाए जाते हैं,धातुओं से जो प्रत्यय लगते हैं उन्हें तिङ् प्रत्यय कहते हैं। इन्हें दो भागों में बाँटा गया है–

(क) परस्मैपद

(ख) आत्मनेपद।

कुछ धातुओं के रूप दोनों में चलते हैं, उन्हें उभयपदी धातुएँ कहते हैं।

हम यहां परस्मैपदी धातुओं के विषय में जानेंगे। परस्मैपदी धातुओं में नौ प्रत्ययों का प्रयोग होता है। इन प्रत्ययों के आधार पर तीन पुरुष और तीन वचन क्रिया पदों में होते हैं।

उत्तम पुरुष दृ जब कर्ता अहम्, आवाम् , वयम् हो तो उत्तम पुरुष का प्रयोग होता है।

मध्यम पुरुष – जब कर्ता त्वम्, युवाम्, यूयम् हो तो मध्यम पुरुष का प्रयोग होता है।

प्रथम पुरुष – जब कर्ता अहम्, आवाम् , वयम्, त्वम्, युवाम् और यूयम् इन छह के अतिरिक्त कोई अन्य हो जैसे सः, तौ, ते, सा, एषः, बालकः, भवान्, कोई नाम आदि तब प्रथम पुरुष का प्रयोग होता है।

वचन – क्रिया को करने वाले कर्ता की संख्या के अनुसार वचन का प्रयोग होता है यदि कर्ता एक हो तो एकवचन दो कर्ता हो तो द्विवचन और तीन या उससे कर्ता अधिक हो तो बहुवचन का प्रयोग होता है ।

लकार – संस्कृत भाषा में काल को लकार कहते हैं। संसार में समस्त कार्य तीन काल में ही होते हैं– वर्तमानकाल, भविष्यतकाल और भूतकाल।

इन तीन कालों के लिए संस्कृत भाषा में निम्न तीन प्रमुख लकारो का प्रयोग होता है होते हैं–

लट्लकारः (वर्तमानकाल), लृट्लकारः (भविष्यतकाल), लङ्लकारः (भूतकाल)।

लट्लकारः (वर्तमानकाल)

लट्लकार की क्रिया के संक्षिप्त रूप

पुरुषः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमः पुरुषः	अति	अतः	अन्ति
मध्यमः पुरुषः	असि	अथः	अथ
उत्तमः पुरुषः	आमि	आवः	आमः

पठ् धातु के लट्लकार के रूप–

प्रथमः पुरुषः	पठति (पठ् + अति)	पठतः (पठ् + अतः)	पठन्ति (पठ् अन्ति)
मध्यमः पुरुषः	पठसि (पठ् + असि)	पठथः (पठ् + अथः)	पठथ (पठ् + अथ)
उत्तमः पुरुषः	पठामि (पठ् + आमि)	पठावः (पठ् + आवः)	पठामः (पठ् आमः)

पठ् (पढ़ना)

लट्लकारः (वर्तमान काल)

पुरुषः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	सः/सा/अयम् पठति	तौ/ते/इमौ पठतः	ते/ताः इमे पठन्ति
मध्यमपुरुषः	त्वं पठसि	युवां पठथः	यूयं पठथ
उत्तमपुरुषः	अहं पठामि	आवां पठावः	वयं पठामः

लृट्लकारः (भविष्यत् काल)

पुरुषः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	सः पठिष्यति	तौ पठिष्यतः	ते पठिष्यन्ति
मध्यमपुरुषः	त्वं पठिष्यसि	युवां पठिष्यथः	यूयं पठिष्यथ
उत्तमपुरुषः	अहं पठिष्यामि	आवां पठिष्यावः	वयं पठिष्यामः

लङ्लकारः (भूतकालः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	सः अपठत्	तौ अपठताम्	ते अपठन्
मध्यमपुरुषः	त्वम् अपठः	युवाम् अपठतम्	यूयम् अपठत
उत्तमपुरुषः	अहम् अपठम्	आवाम् अपठाव	वयम् अपठाम

2. लिख् (लिखना)

लट्लकारः (वर्तमान कालः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	लिखति	लिखतः	लिखन्ति
मध्यमपुरुषः	लिखसि	लिखथः	लिखथ
उत्तमपुरुषः	लिखामि	लिखावः	लिखामः

लृट्लकारः (भविष्यत् कालः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	लेखिष्यति	लेखिष्यतः	लेखिष्यन्ति
मध्यमपुरुषः	लेखिष्यसि	लेखिष्यथः	लेखिष्यथ

उत्तमपुरुषः	लेखिष्यामि	लेखिष्यावः	लेखिष्यामः

लङ्लकारः (भूतकालः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	सः अलिखत्	तौ अलिखताम्	ते अलिखन्
मध्यमपुरुषः	त्वम् अलिखः	युवाम् अलिखतम्	यूयम् अलिखत
उत्तमपुरुषः	अहम् अलिखम्	आवाम् अलिखाव	वयम् अलिखाम

(च) अव्ययपदानि

वे शब्द जिनमें लिंग, वचन, पुरुष, कारक और काल के कारण कोई बदलाव (विकार) नहीं होता, जो हर स्थिति में अपने मूल रूप में ही रहते हैं, यानी 'जो व्यय न हो वे अव्यय कहलाते हैं। ये तीनों लिंगों, सभी विभक्तियों और सभी वचनों में हमेशा समान रहते हैं। इन्हें अविकारी शब्द भी कहते हैं । ये वाक्य में हमेशा एक समान रहते हैं । जैसे अत्र, तत्र, सर्वत्र, कुत्र, प्रातः, सायं, च, अपि, एव, अद्य, ह्यः, श्वः।

सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु।

वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम्।।

अव्यय	**अर्थ**	**वाक्य**
अत्र	यहाँ	रामः अत्र क्रीडति।
तत्र	वहाँ	तत्र नदी वहति।
सर्वत्र	सब जगह	ईश्वरः सर्वत्र अस्ति।
कुत्र	कहाँ	जलं कुत्र अस्ति।
प्रातः	सुबह	अहं प्रातः भ्रमामि।
सायं	शाम	खगाः सायं नीडे आगच्छन्ति।
च	और	कृष्णः गीता च गायतः।
अपि	भी	मम भ्राता अपि पठति।

एव ही परिश्रमः एव जयति।

अद्य आज अद्य सोमवासरः अस्ति।

ह्यः बीता हुआ कल ह्यः रविवासरे अवकाशः अस्ति।

श्वः आने वाला कल श्वः मङ्गलवासरे मम जन्मदिवसः अस्ति।

1. मञ्जूषातः शुद्धम् उत्तरं चित्वा लिखत।

(मञ्जूषा में से शुद्ध उत्तर चुनकर लिखिए।)

(क) मम विद्यालये बालकः बालिकाः ..... पठन्ति।

(ख) सूर्यः .... पूर्वदिशायाम् उदेति।

(ग) अहं .... ग्रामात् अगच्छम्।

(घ) त्वं ह्यः .... आसीत्।

(ङ) वायुः .... प्रवहति।

मञ्जूषा

ह्यः, सर्वत्र, प्रातः, च, कुत्र

(छ) संख्या–ज्ञानम्

संख्यावाचि–शब्दाः

जिन शब्दों से व्यक्तियों, वस्तुओं आदि की संख्या (गिनती) का पता चलता है, वे संख्यावाची शब्द कहलाते हैं; जैसे– एक, दो, तीन आदि।

- संख्यावाची शब्दों का प्रयोग विशेषण के रूप में किया जाता है। अतः जो लिङ्ग, वचन, विभक्ति संज्ञा शब्दों का होता है, उसी के अनुसार संख्यावाची शब्दों का भी प्रयोग होगा।

- एक से चार तक संख्यावाची शब्दों के रूप तीनों लिंगों में अलग–अलग होते हैं; इस तरह–

संख्यावाचिनः शब्दाः

	पुल्लिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग
एक			
	एकः वृक्षः	एका लता	एकम् पुष्पम्
द्वि			
	द्वौ छात्रौ	द्वे अध्यापिके	द्वे नेत्रे
त्रि			
	त्रयः बालाः	तिस्रः कन्याः	त्रीणि क्रीडनकानि
चतुः			
	चत्वारः अश्वाः	चतस्रः कलिकाः	चत्वारि कारयानानि

पाँच से आगे की संख्याओं के शब्द रूप तीनों लिंगों में समान होते हैं–

सप्त सैनिकाः (सात सैनिक) सप्त बालिकाः (सात बालिकाएँ) सप्त पुस्तकानि (सात पुस्तके)

अष्ट खगाः (आठ पक्षी) अष्ट महिलाः (आठ महिलाएँ) अष्ट पत्राणि (आठ पत्र)

नव शुकाः (नौ तोते) नव गायिकाः (नौ गायिकाएँ) नव चक्राणि(नौ चक्र)

दश मयूराः (दस मोर) दश अजाः (दस बकरियों)दश नक्षत्राणि (दस नक्षत्र)

एकतः पञ्चाशत् पर्यन्तं संख्यावाचकशब्दाः

1 एकः / एका / एकम्

2. द्वौ / द्वे / द्वे

3. त्रयः / तिस्रः / त्रीणि

4. चत्वारः / चतस्रः / चत्वारि

5. पञ्च

6. षड् (षट्)

7. सप्त

8. अष्ट

9. नव

10. दश

11. एकादश

12. द्वादश

13. त्रयोदश

14. चतुर्दश

15. पञ्चदश

16. पोडश

17. सप्तदश

18. अष्टादश

19. नवदश

20. विंशतिः

21. एकविंशतिः

22. द्वाविंशतिः

23. त्रयोविंशतिः
24. चतुर्विंशतिः
25. पञ्चविंशतिः
26. षड्विंशतिः
27. सप्तविंशतिः
28. अष्टाविंशतिः
29. नवविंशतिः / एकोनत्रिंशत्
30. त्रिंशत्
31. एकत्रिंशत्
32. द्वात्रिंशत्
33. त्रयस्त्रिशत्
34. चतुस्त्रिंशत्
35. पञ्चत्रिंशत्
36. षट्त्रिंशत्
37. सप्तत्रिंशत्
38. अष्टात्रिंशत्
39. नवत्रिंशत्
40. चत्वारिंशत्
41. एकचत्वारिंशत्
42. द्विचत्वारिंशत्
43. त्रिचत्वारिंशत्
44. चतुश्चत्वारिंशत्

45. पञ्चचत्वारिंशत्

46. षट्चत्वारिंशत्

47. सप्तचत्वारिंशत्

48. अष्टचत्वारिंशत्

49. नवचत्वारिंशत्

50. पञ्चाशत्

अभ्यासः–

ऊपर दिये गये चित्र में से गणना करके संख्या लिखिए–

नमानि	संख्याः
(क) मयूरौ	....
(ख) पुस्तके	....

(ग) महिलाः ....

(घ) चक्राणि ....

(ङ) सैनिकाः ....

(च) बालाः ....

(छ) अजाः ....

(ज) शुकाः ....

(झ) लताः ....

(ञ) गृध्रः ....

1. अङ्कानां स्थाने उचितसंख्यावाचकेन संस्कृतपदेन रिक्तस्थानं पूरयत।

(अंकों के स्थान पर उचित संख्यावाचक संस्कृतपद से रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।)

यथा– (9) नव वृक्षाः

(क) (23) .... वृक्षाः

(ख) (15) .... वानराः

(ग) (7) .... नक्षत्राणि

(घ) (4) .... चक्राणि

(ङ) (1) .... पुस्तकम्

(च) (13) .... गजाः

(छ) (1) .... चटका

(ज) (2) .... वृक्षौ

2. प्रदत्तविकल्पेभ्यः उचितसंख्यावाचकं पदं चित्वा रिक्तस्थानानि पूरयत।

(दिए गए विकल्पों में से उचित संख्यावाचक पद को चुनकर रिक्त स्थान पूरे कीजिए।)

(क) मम पार्श्वे त्रीणि कलमानि सन्ति ।

(तिस्रः / त्रयः / त्रीणि)

(ख) वृक्षे ...... चटकाः तिष्ठन्ति ।

(चत्वारः चतस्रः चत्वारि)

(ग) ....बालकाः कक्षायां सन्ति।

(पञ्चमः / पञ्च / पञ्च)

(घ) सप्ताहे .... दिनानि सन्ति।

(सप्त / सप्ताः सप्तानि)

(च) एकस्मिन् वर्षे .... मासाः भवन्ति।

(द्वादशाः / द्वादश / द्वादशः)

(छ) मम गृहे .... सेविका अस्ति।

(एकः / एका / एकम्)

3. अधोलिखित–वाक्यानि शुद्धानि कुरुत। (निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध कीजिए।)

(क) त्रयः बालिकाः पठन्ति।

(ख) द्वे गजौ भ्रमतः।

(ग) चतस्रः वानराः तत्र सन्ति।

(घ) मम द्वौ नेत्रे सन्ति।

(ङ) मम एकम् नासिका अस्ति।

3.नैतिक–शिक्षा

श्लोकाः –

1. उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।

न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः।। (हितोपदेशः)

अन्वयः – कार्याणि उद्यमेन हि सिध्यन्ति न मनोरथैः। (यथा) सुप्तस्य सिंहस्य मुखे मृगाः न हि प्रविशन्ति।

अर्थः – उद्यम अर्थात् परिश्रम से ही सभी कार्य सफल होते हैं इच्छाओं से नहीं। जैसे सोए हुए शेर के मुख में हिरन स्वयं प्रवेश नहीं करते।

भावार्थः – परिश्रमेण एव कार्याणि पूर्णानि भवन्ति, न तु इच्छाभिः। यथा सुप्तस्य सिंहस्य मुखे मृगाः स्वयं न आगच्छन्ति।

अभ्यासः–

(1) निम्नलिखित में खाली स्थान भरिए–

(क) उद्यमेन हि कार्याणि.................. ।

(ख) कार्याणि न ....सिध्यन्ति।

(ग) ....सिंहस्य मुखे ....न हि प्रविशन्ति।

(ख) निम्नलिखित में **आम्** (हां) और **नहि** (नहीं) से उत्तर दीजिए।

(क) परिश्रमेण कार्याणि सिध्यन्ति। ( )

(ख) बिना परिश्रमं सफलता मिलति। ( )

(ग) यः उद्यमं करोति सः सफलः भवति। ( )

(घ) सिंहस्य मुखे मृगाः स्वयमेव प्रविशन्ति। ( )

2. पापान्निवारयति योजयते हिताय,

गुह्यं निगूहति गुणान् प्रकटीकरोति।
आपद्–गतं च न जहाति ददाति काले,
सन्मित्रलक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः।। (नीतिशतकम्)

अन्वयः – (यत् मित्रं) पापात् निवारयति, हिताय योजयते गुह्यं तिगूहति, गुणान् प्रकटीकरोति, आपद्गतं (मित्रं) न जहाति, काले च ददाति, सन्तः इदं सन्मित्रलक्षणं प्रवदन्ति।

अर्थः – जो मित्र अपने मित्र को बुराइयों से बचाता है, हितकारी कार्य में लगाता है, गुप्त बातों को छिपाता है, उसके गुणों को बताता है, मुसीबत में आए मित्र का साथ नहीं छोड़ता है, समय पर सहायता प्रदान करता है, महापुरुषों ने इस लक्षण को सच्चे मित्र का लक्षण कहा है।

भावार्थः – सन्मित्रं स्वमित्रं पापमार्गात् निवारयति, सत्कार्ये नियोजयति तस्य दोषान् निगूहति, गुणान् वदति, आपत्काले न त्यजति, समये साहाय्यं च करोति, सद्भिः जनैः एतन्मित्रं सन्मित्रं कथ्यते।

अभ्यासः–

(1) निम्नलिखित में खाली स्थान भरिए–

(क) पापात् निवारयति ....हिताय।
(ख) गुह्यं निगूहत ....प्रकटीकरोति।
(ग) आपद्गतं च न ....ददाति काले।
(क) ....प्रवदन्ति सन्तः।

(ख) निम्नलिखित में **आम्** (हां) और **नहि** (नहीं) से उत्तर दीजिए।

(क) सन्मित्रम् पापात् निवारयति। ( )
(ख) सन्मित्रम् ....योजयते। ( )
(ग) सन्मित्रम् ....प्रकटीकरोति। ( )
(घ) आपद्गतं च न ....। ( )

3. **अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।**
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्यायशोबलम्।। (मनुस्मृतिः)

अन्वयः – अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः तस्य चत्वारि आयुः विद्या यशः बलं (च) वर्धन्ते।

अर्थः – अभिवादन अर्थात् सम्मान करने वाले, नित्य बुजुर्गों की सेवा करने वाले, ऐसे मनुष्य की चार चीजें बढ़ जाती हैं– आयु, विद्या, यश एवं बल।

भावार्थः – यः मानवः विनम्रः सुशीलो भवति, यः वृद्धजनानां सेवां सम्मानं च करोति, तस्य मानवस्य आयुः, विद्या, यशः बलं च सदा वर्धन्ते।

अभ्यासः–

(1) निम्नलिखित में खाली स्थान भरिए–

(क) अभिवादन................... ।

(ख) ....वृद्धोपसेविनः।

(ग) ....तस्य वर्धन्ते।

(क) आयुर्विद्यायशो................. ।

(ख) निम्नलिखित में **आम्** (हां) और **नहि** (नहीं) से उत्तर दीजिए।

(क) अभिवादनशीलस्य आयुः वर्धते। ( )

(ख) नित्यं वृद्धोपसेविनः विद्या न वर्धते। ( )

(ग) वृद्धोपसेविनः विद्या वर्धते। ( )

(घ) अभिवादनशीलस्य बलम् न वर्धते ....। ( )

4. **माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः।**
न शोभते सभामध्ये हंसमध्ये बको यथा। (हितोपदेशः)

अन्वयः – माता शत्रुः पिता वैरी, येन बालः न पाठितः। (सः बालः) सभामध्ये न शोभते यथा बकः हंसमध्ये (न शोभते)।

अर्थः – वह माता शत्रु होती है और वह पिता वैरी होता है जिसने अपने बालक को नहीं पढ़ाया। वह बालक सभा में उसी प्रकार शोभा को प्राप्त नहीं होता जैसे हंसों के बीच में बगुला।

भावार्थः – मातापितरौ स्वबालकं अवश्यमेव पाठयेताम् अन्यथा सः अशिक्षितः बालकः सभामध्ये तथैव न शोभते यथा हंसमध्ये बकः न शोभते। अपि च तौ मातापितरौ वैरिणौ इव भवतः।

अभ्यासः–

(1) निम्नलिखित में खाली स्थान भरिए–

(क) माता शत्रुः पिता.................. ।

(ख) येन................न पाठितः।

(ग) न..............सभामध्ये।
(क) ....बको यथा।

(ख) निम्नलिखित में **आम्** (हां) और **नहि** (नहीं) से उत्तर दीजिए।
(क) पिता वैरी न येन बालो न पाठितः। ( )
(ख) माता शत्रुः अस्ति, यया बालो न पाठितः। ( )
(ग) यथा हंसमध्ये बको शोभते। ( )
(घ) सभामध्ये मूर्खः न शोभते। ( )

5. **श्रोत्रं श्रुतेनैव न कुण्डलेन,**
दानेन पाणिर्न तु कङ्कणेन।
विभाति कायः करुणापराणां,
परोपकारैर्न तु चन्दनेन।। (नीतिशतकम्)

अन्वयः – श्रोत्रं श्रुतेन एव न कुण्डलेन, दानेन पाणिः न तु कङ्कणेन, करुणापराणां (च) कायः परोपकारैः विभाति न तु चन्दनेन।

अर्थः – कानों की शोभा ज्ञान की बातें सुनने से होती है कुण्डल से नहीं। हाथों की शोभा दान से होती है कंगन पहनने से नहीं। दयालु अर्थात् सज्जन व्यक्तियों का शरीर परोपकार के कार्यों से ही सुशोभित होता है चन्दन से नहीं।

भावार्थः – कर्णयोः शोभा ज्ञानं श्रतुनेन एवं भवति न तु कङ्कणेन, हस्तयोः शोभा दानेन भवति एवमेव सज्जनानां शरीरस्य शोभा परोपकारकार्यैः भवति न तु चन्दनेन भवति।

अभ्यासः–
(1) निम्नलिखित में खाली स्थान भरिए–
(क) श्रोत्रं ....न कुण्डलेन।
(ख) दानेन पाणिर्न तु .... ।
(ग) ....कायः करुणापराणाम्।
(क) ....र्न तु चन्दनेन।

(ख) निम्नलिखित में **आम्** (हां) और **नहि** (नहीं) से उत्तर दीजिए।

(क) श्रोत्रं श्रुतेन एव विभाति। ( )

(ख) श्रोत्रं कुण्डलेन एव विभाति। ( )

(ग) पाणिः दानेन विभाति। ( )

(घ) कायः परोपकारैः विभाति। ( )

(घ) कायः चन्दनेन एव विभाति। ( )

शब्द–विस्तारः –

उद्यमेन	परिश्रमेण	मेहनत से	By enterprise
सिध्यन्ति	सफलतां प्राप्नुवन्ति	सफल होते हैं	Are Successful
मनोरथैः	इच्छाभिः	इच्छाओं से	By desires
मुखे	वदने / वक्त्रे	मुख में	In mouth
पापात्	कल्मषात्	बुराई से	From evil
निवारयति	अवरोधयति	बचाता है / रोकता है	Protects
योजयते	नियोजयति	लगाता है	Commeets
गुह्यं	रहस्यं	गुप्त बात	Mystery
निगूहति	गोपयति	छिपाता है / रक्षा करता है	Hides
हिताय	कल्याणाय	भलाई के लिए	For well being
जहाति	त्यजति	छोड़ता है	Leaves
प्रवदन्ति	कथयन्ति	कहते हैं	Say
वर्धन्ते	वृद्धिं प्राप्नुवन्ति	बढ़ जाते हैं	Increases
वैरी	अरिः / शत्रुः	दुश्मन	Enemy
बकः	कह्वः	बगुला	Heron
श्रोत्रं	कर्णः	कान	Ear
श्रुतेन	श्रवणेन	सुनने से	By listening
पाणिः	करः / हस्तः	हाथ	Hand
कङ्कणेन	करभूषणेन	कंगन से	From the bracelet
विभाति	शोभते	शोभा होती है	Looks beautiful
कायः	शरीरम्	शरीर	Body
करुणापराणां	दयालूनां	दयालुओं का	Of the kinds

प्रश्नाः –

क. एकपदेन उत्तरत–

(1) कार्याणि केन सिध्यन्ति?

(2) मृगाः कुत्र न प्रविशन्ति?

(3) मित्रं कान् प्रकटीकरोति?

(4) हंसमध्ये कः न शोभते?

(5) अपाठितः बालः कुत्र न शोभते?

(6) पाणिः केन विभाति?

(7) करुणापराणां कायः कैः न विभाति?

ख. पूर्णवाक्येन उत्तरत –

(1) कस्य मुखे मृगाः न प्रविशन्ति?

(2) सन्मित्रलक्षणं कं प्रवदन्ति?

(3) वृद्धोपसेविनः किं किं वर्धन्ते?

(4) कुण्डलेन किं न विभाति?

(5) श्रुतेन किं विभाति?

ग. अन्वयपूर्तिं कुरुत –

(1) अन्वयः – कार्याणि .... हि सिध्यन्ति न ....।

(2) .... नित्यं .... तस्य .... विद्या .... यशः .... वर्धन्ते।

घ. भावार्थपूर्तिं कुरुत –

(1) सन्मित्रं स्वमित्रं .... निवारयति, हितकार्ये .... दोषान् .... गुणान् .... मित्रस्य आपत्काले .... करोति सद्भिः जनैः ....कथ्यते।

पापान्निवारयति .... प्रवदन्ति सन्तः।।

(2) परिश्रमेण एव .... सफलानि भवन्ति न तु ....। यथा .... मुखे .... स्वयं न ....।

उद्यमेनैव .... प्रविशन्ति मुखे मृगाः।।

ङ. समुचितं मेलयत –

(1)	न हि सुप्तस्य सिंहस्य	(क)	हंसमध्ये बको यथा।
(2)	गुह्यं निगूहति	(ख)	परोपकारैर्न तु चन्दनेन।
(3)	अभिवादनशीलस्य	(ग)	प्रविशन्ति मुखे मृगाः।
(4)	न शोभते सभामध्ये	(घ)	गुणान् प्रकटीकरोति।
(5)	विभाति कायः करुणापराणां	(ङ)	नित्यं वृद्धोपसेविनः।

च. निम्नलिखिताः श्लोकाः कस्मिन् ग्रन्थे सन्ति? मञ्जूषातः चित्वा कोष्ठके लिखन्तु।

(1)	उद्यमेन सिध्यन्ति..........	(......................)
(2)	पापान्निवारयति...............	(......................)
(3)	अभिवादनशीलस्य...............	(......................)
(4)	श्रोत्रं श्रुतेनैव न तु.....................	(......................)
(5)	माता शत्रुः पिता वैरी................	(......................)

मञ्जूषा

हितोपदेशः, नीतिशतकम्, मनुस्मृतिः, रघुवंशम्, मेघदूतम्, रामायणम्, विदुरनीतिः, भट्टिकाव्यम्

4.भारतीय ज्ञान–परम्परा

(क) वैदिक साहित्य का परिचयात्मक ज्ञान

वैदिक साहित्य, भारतीय संस्कृति और धर्म का सबसे प्राचीन और महत्त्वपूर्ण अङ्ग है। यह ज्ञान, दर्शन, अनुष्ठान और सामाजिक सिद्धांतों का एक विशाल संग्रह है, जो हजारों साल पहले रचा गया था। वैदिक साहित्य केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं है, बल्कि यह प्राचीन भारतीय सभ्यता, संस्कृति और ज्ञान–विज्ञान का एक अमूल्य स्रोत है। इसमें खगोल विज्ञान, गणित, चिकित्सा, संगीत और दर्शन जैसे विभिन्न क्षेत्रों की जानकारी समाहित है। यह हमें उस समय के समाज, अर्थव्यवस्था, और जीवन शैली को समझने में मदद करता. है। वैदिक साहित्य का अध्ययन ज्ञान–विज्ञान भारतीय दर्शन और संस्कृति की गहरी समझ के लिए आवश्यक है।

वैदिक साहित्य को चार भागों में विभाजित किया जाता है संहिता, ब्राह्मणग्रंथ, आरण्यक और उपनिषद् ।

1. **संहिता–** संहिताओं में वैदिक मन्त्रों का संग्रह है। इनके चार मुख्य रूप हैंः ऋग्वेदसंहिता, यजुर्वेदसंहिता, सामवेदसंहिता तथा अथर्ववेदसंहिता। ज्ञान–विज्ञान के सतत चिन्तन–मनन के साथ यज्ञ सनातन संस्कृति में महत्त्वपूर्ण करणीय कर्म था अतः इनका विभाजन वैदिक यज्ञों में काम करने वाले चार ऋत्विजों (यज्ञ कराने वालों) के कार्यों को ध्यान में रखकर हुआ था। यज्ञों में ये चार ऋत्विज् होते थे– होता, अध्वर्यु, उद्गाता तथा ब्रह्मा। होता, देवताओं को यज्ञ में बुलाता है और ऋचाओं का पाठ करते हुए यज्ञ–देवों की स्तुति करता है। होता के प्रयोग के लिए उपयोगी मन्त्रों का संग्रह ऋग्वेदसंहिता में है। अध्वर्यु का काम यज्ञ का विधिपूर्वक सम्पादन करना है। इसके लिए आवश्यक मन्त्र यजुर्वेदसंहिता में संकलित हैं। उद्गाता का काम यज्ञ में ऋचाओं का सस्वर गान करना है। वह मधुर स्वर में देवताओं को प्रसन्न करता है। उसके उपयोग के लिए ऋग्वेदसंहिता के मंत्र सामवेदसंहिता में संकलित किए गए हैं। ब्रह्मा नामक ऋत्विज् यज्ञ का पूरा निरीक्षण करता है, जिससे कोई त्रुटि न हो। यद्यपि वह सभी वेदों का ज्ञाता होता है, किन्तु उसका अपना विशिष्ट वेद अथर्ववेद संहिता है। इन संहिताओं का अध्ययन विभिन्न परिवारों में पृथक् पृथक् रूप से होता था, परिणामस्वरूप कालान्तर में इनकी अनेक शाखाएँ हो गई। आज वैदिक संहिताओं की कुछ ही शाखाएँ उपलब्ध हैं।

2. **ब्राह्मण–ग्रन्थाः**–ब्राह्मण–ग्रन्थों का मुख्य उद्देश्य संहिताओं के मंत्रों द्वारा यज्ञों की व्याख्या करना था। इस प्रसंग में बहुत–सी नैतिक, सामाजिक तथा राजनीतिक बातें भी आई हैं। वैदिक धर्म का सांगोपांग विवेचन इन ग्रन्थों में किया गया है। वैदिक संहिताओं की प्रत्येक शाखा की व्याख्या करने वाले ब्राह्मण–ग्रन्थ पृथक् पृथक् हैं।

3. आरण्यक–ग्रन्थाः–ब्राह्मण–ग्रन्थों से सम्बद्ध आरण्यकों की रचना वनों में हुई। वैदिक कर्मकाण्ड, अनुष्ठान की उत्पत्ति और उसके महत्त्व के विषय में ऋषियों का जो चिन्तन हुआ, उसे आरण्यकों में रखा गया। ब्राह्मण–ग्रन्थों के समान ये भी सरल गद्य में ही लिखे गए। विभिन्न वैदिक संहिताओं की शाखाओं के आरण्यक भी पृथक् पृथक् थे। कर्मकाण्डी जनसमुदाय को ज्ञानकाण्ड की ओर लगाने का प्रयास इन आरण्यकों में हुआ है। इनका सम्बन्ध वानप्रस्थ आश्रम से भी था।

4. उपनिषद्– वैदिक साहित्य के विकास के अन्तिम चरण में उपनिषद्–ग्रन्थ आते हैं। इनमें दर्शन–शाखा की विवेचना हुई, यद्यपि यह शास्त्र यत्र–तत्र पहले भी संहिताओं और आरण्यकों में आ चुका था। उपनिषदों में गुरु–शिष्य के संवादों के रूप में बहुत गूढ़ बातें कही गई हैं। आत्मा, ब्रह्म तथा संसार के रहस्यों को इन विवेचनाओं में प्रकाशित किया गया है। वैदिक साहित्य के अन्तिम भाग में होने तथा वैदिक दर्शन के विकसित रूप को प्रकाशित करने के कारण इन्हें वेदान्त भी कहा जाता है।

वैदिक साहित्य के प्रमुख ग्रन्थों का परिचय–

1. ऋग्वेदः– ऋग्वेद विश्व का प्रथम व्यवस्थित उपलब्ध ग्रन्थ है। सप्तसिन्धु प्रदेश में रहने वाले आर्यों ने जो अपने धार्मिक विचार तथा दार्शनिक भावनाएँ काव्य–रूप में व्यक्त की थीं, उन्हीं का संग्रह ऋग्वेद संहिता है। ऋग्वेद के समय में जो सांस्कृतिक चेतना थी, वही आज भी भारतीय मानस में वर्तमान है। इससे संस्कृत की धारा के निरन्तर प्रवाह की पुष्टि होती है। ऋग्वेद के रचनाकाल को लेकर अनेक मत प्रचलित हैं। परम्परागत भारतीय मत है कि वेद अपौरुषेय हैं अर्थात् किसी पुरुष या व्यक्ति विशेष ने इनकी रचना नहीं की। वैदिक संहिताओं में संकलित मन्त्रों के साथ मन्त्रन्द्रष्टा ऋषि, देवता तथा छन्द का उल्लेख भी प्राप्त होता है। आधुनिक विद्वान् इससे सहमत नहीं हैं। उनके अनुसार इनकी भी रचना उसी प्रकार हुई, जिस प्रकार संस्कृत के अन्य ग्रन्थों की हुई। अपने इसी मत के आधार पर उन्होंने ऋग्वेद के काल–निर्णय का प्रयास किया। आधुनिक विद्वान् ऋग्वेद के काल के विषय में वे स्वयं भी एकमत नहीं हैं। अलग–अलग विद्वानों ने इसका काल अलग–अलग माना है। 6000 ई. पू. से लेकर 800 ई. पू. तक इसका समय माना गया है। अधिसंख्य विद्वानों के अनुसार इसकी रचना 2000 ई. पू. के आसपास हुई।

ऋग्वेद में अपने समय के बिखरे हुए मन्त्रों का संग्रह है, जो विभिन्न ऋषि परिवारों में प्रचलित थे और जिनकी परम्परा उन ऋषि परिवारों में चली आ रही थी। ऋग्वेद को इसी संग्रह के कारण संहिता कहा गया है। इसमें ऋचाओं का संकलन है। पूरा ऋग्वेद 10 मण्डलों में विभक्त है। प्रत्येक मण्डल में अनेक सूक्त हैं। सम्पूर्ण ऋग्वेद में 1028 सूक्त हैं। कई ऋचाओं के संग्रह को सूक्त कहते हैं, जो किसी विशेष देवता या विषयवस्तु से सम्बद्ध होते हैं। मण्डलों का विभाजन ऋषियों के परिवारों के आधार पर हुआ है। कई मण्डलों में किसी एक ही ऋषि द्वारा या उसके परिवार में पठित ऋचाओं का. ही संग्रह है। कई मन्त्रों की उद्भावना ऋषिकाओं ने भी की है, जैसे– लोपामुद्रा, अपाला, रोमशा आदि। ऋचाओं की कुल संख्या 10580 है।

इस वेद के प्रथम तथा दशम मण्डल का आकार अपेक्षाकृत बड़ा है। इनमें अनेक वंशों के ऋषियों की रचनाएँ हैं। इन मण्डलों को विषयवस्तु तथा भाषा के आधार पर बाद की रचना भी माना गया है।

इन्हीं मण्डलों में आर्यों के दार्शनिक और लौकिक विचार व्यक्त हुए हैं। अन्य मण्डल प्राचीनतम हैं। नवम मण्डल में सोम से सम्बद्ध मन्त्रों को एकत्र किया गया है। शेष मण्डलों में एक–एक गोत्र या वंश के ऋषियों की रचनाएँ हैं, इसलिए इनको वंश–मण्डल भी कहा जाता है। सप्तम मण्डल की ऋचाएँ सबसे पुरानी मानी जाती हैं।

यद्यपि ऋग्वेद की इक्कीस शाखाएँ थी, किन्तु आज केवल शाकल, आश्वलायन एवं शांखायन शाखा ही मिलती हैं। ऋग्वेद में आर्यों की एक लंबी बौद्धिक परम्परा प्राप्त होती है। इस परम्परा में धार्मिक, सामाजिक और दार्शनिक विषयों का भी निरूपण हुआ है। भारत की प्राचीनतम संस्कृति के विकास के ज्ञान के लिए ऋग्वेद का अनुशीलन अपेक्षित है। धार्मिक दृष्टि से रचित सूक्तों की संख्या इस संहिता में अवश्य ही सर्वाधिक है। ऋग्वेद के सूक्तों में प्रमुख रूप से इन्द्र और अग्नि देवता की प्रार्थना है। अन्य देवताओं में सविता, रुद्र, मित्र, वरुण, सूर्य, मरुत् आदि के अतिरिक्त उषा देवी भी हैं। यही नहीं, मन्यु (क्रोध) के रूप में अमूर्त देवता की भी प्रार्थना की गई है।

इन देवताओं में नियामक तत्त्व के रूप में ऋग्वेद के ऋषियों ने ईश्वर को जगत् का नियन्ता बताया है, जिसे उन्होंने पुरुष एवं हिरण्यगर्भ भी कहा है। हिरण्यगर्भ सूक्त में कहा गया है कि संसार के आरम्भ में हिरण्यगर्भ ही उत्पन्न हुआ, जो समस्त चराचर का स्वामी था और इसी ने स्वर्ग, पृथ्वी सभी को धारण किया। विशाल पर्वत और गंभीर सागर उस हिरण्यगर्भ रूप परमात्मा (प्रजापति) के अनुशासन में ही अवस्थित हैं।

ऋग्वेद संहिता में लौकिक विषयों पर भी ऋषियों की दृष्टि पड़ी है। इसमें द्यूत–क्रीड़ा के दोष, मण्डूकों की ध्वनि, विवाह की विधि, दान की महिमा इत्यादि विषयों का भी उल्लेख है। इससे प्रतीत होता है कि ऋषियों ने धर्म और दर्शन की विवेचना में तल्लीन होकर लौकिक विषयों की उपेक्षा नहीं की थी। उषा के सूक्तों में वैदिक ऋषियों की ललित भावना भी दृष्टिगत होती है। ये सूक्त परवर्ती गीतिकाव्य के स्रोत समझे जाते हैं।

पुरुष–सूक्त में सृष्टि की प्रक्रिया का प्रतिपादन है, तो नासदीय सूक्त में सृष्टि की रहस्यमयता का भी संकेत है। सृष्टि से पहले न सत् था, न असत्। न ही उस समय मृत्यु थी, न अमरता। उस समय अन्धकार ही सर्वत्र वर्तमान था। इस प्रकार ऋग्वेद में गूढ़ दार्शनिक विचारों को भी महत्त्व दिया गया था। ऋग्वेद में बहुत से संवाद–सूक्त भी हैं, जिन्हें कुछ लोग नाटकों का प्रारम्भिक रूप भी कहते हैं। इन सूक्तों में पुरुरवा–उर्वशी तथा यम–यमी के संवाद सामान्य लोकजीवन के भावों को व्यक्त करते हैं। इन संवादों में प्रेम, हास्य, करुणा एवं वीरता जैसे मानवीय भावों का भी चित्रण हुआ है।

ऋग्वेद के अनुशीलन से तात्कालिक आर्यों के जीवन के विषय में पर्याप्त जानकारी मिलती है। आर्य दानी, उदार और धर्मनिष्ठ थे, वे विभिन्न प्रथाओं को मानते थे। ऋग्वेद सप्तसिन्धु प्रदेश की तात्कालिक सभ्यता और संस्कृति का चित्र प्रस्तुत करने वाला अद्वितीय ग्रन्थ है।

2. यजुर्वेदः– प्राचीन काल में यजुर्वेद की कुल 101 शाखाएँ थीं। इसके दो रूप हैं–कृष्णयजुर्वेद तथा शुक्लयजुर्वेद। कृष्णयजुर्वेद की सर्वाधिक प्रसिद्ध शाखा तैतिरीय संहिता और शुक्ल यजुर्वेद की प्रसिद्ध

शाखा वाजसनेयी संहिता है। कुछ लोग इसे ही मौलिक यजुर्वेद कहते हैं। इसमें केवल मन्त्रों का संग्रह है, जबकि कृष्णयजुर्वेद की संहिता में ब्राह्मण ग्रन्थ के विषय भी मिश्रित हैं। कृष्णयजुर्वेद की अन्य संहिताएँ हैं—मैत्रायणी, काठक, कपिष्ठल इत्यादि। इनका प्रचार दक्षिण भारत में अधिक है।

यजुर्वेद अनुष्ठान—विषयक संहिता है। यज्ञ में अध्वर्यु के द्वारा प्रयुक्त मन्त्रों का इसमें संग्रह है। कृष्णयजुर्वेद में इन मन्त्रों के विषय में चर्चाएँ भी हैं, किन्तु शुक्लयजुर्वेद इन चर्चाओं से शून्य है। शुक्लयजुर्वेद में 40 अध्याय हैं, जिनमें विविध यज्ञों से सम्बद्ध मन्त्र संकलित हैं। इन यज्ञों में दर्शपूर्णमास, अग्निहोत्र, चातुर्मास, सोमयाग, वाजपेय, राजसूय, सौत्रामणि, अश्वमेध आदि प्रमुख हैं। इसके सोलहवें अध्याय को रुद्राध्याय कहते हैं, जिसमें रुद्र के विविध रूपों को नमस्कार किया गया है। चौंतीसवें अध्याय में शिवसंकल्प की प्रार्थना है। पैंतीसवें अध्याय में पितरों की प्रार्थना की गई है। अन्तिम अध्याय दार्शनिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें ईश्वर को संसार का नियामक कहा गया है। यही अध्याय कुछ परिवर्तनों के साथ ईशावास्योपनिषद् के रूप में आया है। यजुर्वेद में बहुत सुन्दर प्रार्थना—मन्त्र हैं, जैसे—

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।

अर्थात्, हे अग्निदेव । धन प्राप्ति के लिए आप हमें सन्मार्ग पर ले चलें। हे देव, आप हमारे (अच्छे—बुरे) सभी कार्यों को जानते हैं।

यजुर्वेद में कुछ मन्त्र पद्यात्मक और कुछ गद्यात्मक हैं। कर्मकाण्ड में उपयोगी होने के कारण यजुर्वेद अन्य सभी वेदों की अपेक्षा अधिक लोकप्रिय है। वेदों के अधिकांश भाष्यकार यजुर्वेद पर व्याख्या लिखना अपना पहला कर्तव्य समझते हैं।

3. सामवेदः— प्राचीन ग्रन्थों की सूचना के आधार पर सामवेद की 1000 शाखाए थीं, किन्तु आज तीन—चार शाखाएँ ही उपलब्ध हैं। इनमें कौथुम शाखा अधिक लोकप्रिय है। सामवेद के मन्त्रों का प्रयोग यज्ञ में देवताओं के आवाहन के लिए उचित स्वर के साथ उद्गाता द्वारा किया जाता था। इसलिए साम—मन्त्रों का पाठ नहीं, अपितु गान होता है। सामवेद छन्दोबद्ध है तथा 75 मन्त्रों को छोड़कर शेष मन्त्र ऋग्वेद में भी उपलब्ध होते हैं। सामवेद के मन्त्रों के गान में लय तथा स्वर का विशेष विधान है।

सामवेद संहिता के दो भाग हैं— पूर्वार्चिक तथा उत्तरार्चिक। पूर्वार्चिक में आग्नेय, ऐन्द्र, पवमान तथा आरण्य—पर्व के रूप में मन्त्रों का विभाजन है। वस्तुतः इन देवताओं से सम्बद्ध मन्त्रों को पृथक् पृथक् रखा गया है। उत्तरार्चिक को दशरात्र, संवत्सर, एकाह आदि विषयों के अनुसार व्यवस्थित किया गया है। सामवेद में ग्रामगेय (स्वर—विशेष) गानों की संख्या सर्वाधिक है। आरण्यगान में संकटपूर्ण और वर्जित रागों को संकलित किया जाता था। इसलिए ये ग्रामों में नहीं गाए जाते थे। इन दोनों से सम्बद्ध क्रमशः ऊहगान और ऊह्यगान हैं, जो यज्ञकार्यों में साम—मन्त्रों को क्रमबद्धता प्रदान करते हैं। इस प्रकार इसमें ये चार महत्त्वपूर्ण गान हैं— ग्राम, आरण्य, ऊह तथा ऊह्य।

सामवेद का महत्त्व संगीत की दृष्टि से बहुत अधिक है। इससे भारतीय संगीत का उद्भव हुआ। सामवेद के रागों का विकास धार्मिक तथा सांस्कृतिक दोनों प्रकार के गीतों से हुआ। सामगान की अनेक विधियों में (जो सामवेद के ब्राह्मण ग्रन्थों में विहित हैं) अब कुछ ही शेष हैं।

4. अथर्ववेदः– अथर्ववेद में यज्ञ से भिन्न विषयों का विपुल संकलन है। बहुत दिनों तक कर्मकाण्ड से इसे पृथक् रखा गया था। त्रयी का अर्थ तीन वेद होता है, जिसमें अथर्ववेद का समावेश नहीं होता। किन्तु वैदिक परम्परा में ही उसे ब्रह्मवेद कहा गया है अर्थात् वह ब्रह्मा नामक ऋत्विज्ञ के उपयोग के लिए है। वस्तुतः अथर्ववेद को अथर्वाङ्गिरस वेद कहा जाता था। अर्थात् इसके दो ऋषि थे अथर्वा और अङ्गिरा।

इस वेद का विभाजन 20 काण्डों में किया गया है, जिनमें सूक्त और मन्त्र हैं। सूक्तों की संख्या 731 तथा मन्त्रों की 5849 है। इनमें से लगभग 1200 मन्त्र ऋग्वेद संहिता से लिए गए हैं। इस वेद का षष्ठांश गद्य में है। काण्डों के विभाजन में कोई विषय–व्यवस्था नहीं है, किन्तु एक सूक्त में किसी एक ही विषय से सम्बद्ध मन्त्र हैं। आरम्भिक काण्डों का संकलन व्यवस्था विशेष के अन्तर्गत है, क्योंकि प्रथम काण्ड में चार मन्त्रों वाले, द्वितीय काण्ड में पाँच मन्त्रों वाले, तृतीय में छः मन्त्रों वाले, चतुर्थ काण्ड में सात मन्त्रों वाले और पंचम काण्ड में आठ या अधिक मन्त्रों वाले सूक्त रखे गए हैं। छठे काण्ड के 142 सूक्तों में सभी तीन मन्त्र वाले हैं। इसी प्रकार सातवें काण्ड के 118 सूक्तों में एक–दो मन्त्रों वाले सूक्त हैं। पन्द्रहवाँ एवं सोलहवाँ काण्ड गद्य में है। ये भाषा–शैली की दृष्टि से ब्राह्मण–ग्रन्थों के समान लगते हैं।

अथर्ववेद में ही सर्वप्रथम लौकिक विषयों को व्यापक महत्त्व दिया गया है। इसलिए इसकी विषयवस्तु में बहुत विविधता मिलती है। जीवन के प्रायः सभी पक्षों का स्पर्श इसमें हुआ है, किन्तु विशेष रूप से तात्कालीन विश्वासों का प्रकाशन इसमें अधिक है। इसी क्रम में अभिचार (मारण, मोहन, उच्चाटन आदि) से सम्बद्ध क्रियाओं का निरुपण है। अध्यात्म–विद्या, शत्रुनाश, आरोग्य प्राप्ति, गृह–सुख, कृषि में वृद्धि, भूत–प्रेतों का निवारण, कीट–पतंगों का नाश, इष्ट वस्तु का लाभ, विवाह, वाणिज्य, पितरों की पूजा आदि का विवेचन अथर्ववेद के मन्त्रों में है। विविध रोगों का स्वरूप बतलाकर उनके निवारण की व्यापक विधि इसमें दी गई है। कहीं सर्प–विष के नाश की प्रार्थना है, तो कहीं रोगों के निवारण के लिए शमीवृक्ष से प्रार्थना की गई है। कहीं जीविका–प्राप्ति के लिए प्रार्थना है। ब्रह्मचर्य की महत्ता बतलाने के साथ–साथ सौमनस्य के लिए भी प्रार्थना की गई है "मैं तुम्हारे मन को सौहार्द तथा सौमनस्य से युक्त करता हूँ। सभी लोग परस्पर प्रेम रखें, जैसे गाय अपने बछड़े से रखती है। पुत्र पिता का अनुगामी हो, माता वात्सल्यमयी हो, पत्नी पति से मधुर वाणी का व्यवहार करे। भाई–भाई से द्वेष न करे, बहन बहन से द्वेष–न रखे, सभी अच्छे संकल्प लेकर कल्याण युक्त वाणी बोलें।" अथर्ववेद के बारहवें काण्ड में भूमिसूक्त है, जिसमें पृथ्वी की महत्ता का प्रतिपादन है। इसी में कहा गया है– माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः। अर्थात् पृथ्वी मेरी माता है, मैं उसका पुत्र हूँ।

अथर्ववेद में दार्शनिक सूक्त भी आए हैं, जो ब्रह्म, तप और असत् के विषय में विचार करते हैं। ये विचार बाद में उपनिषदों में विकसित हुए। सामान्य वैदिक धर्म की मुख्य धारा से पृथक् विशुद्ध लोक–प्रचलित विश्वासों का प्रतिपादक होने के कारण अथर्ववेद का वैदिक साहित्य में स्वतन्त्र महत्त्व है।

2. वेदाङ्गानि

कालक्रम से वैदिक संस्कृत के स्थान पर लौकिक संस्कृत का प्रचलन होने पर, वैदिक मन्त्रों का उच्चारण करना तथा अर्थ समझना कठिन हो गया। यास्क ने कहा है कि वैदिक अर्थों को समझने में कठिनाई का अनुभव करने वाले लोगों ने निरुक्त तथा अन्य वेदाङ्गों की रचना की। वेदों के छः

अंग माने गए— शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष तथा छन्द। इन्हें समझने वाला व्यक्ति ही वेदों का सही उच्चारण, अर्थबोध एवं यज्ञ कार्य कर सकता था। इन सभी शास्त्रों के ग्रन्थ लौकिक संस्कृत में लिखे गए, क्योंकि इनके विकास का कारण ही था वैदिक संस्कृत का प्रयोग समाप्त हो जाना। इनका काल 800 ई. पू. से प्रारम्भ होता है।

शिक्षा— यह उच्चारण का विज्ञान है, जो स्वर—व्यञ्जन के उच्चारण का विधान करता है। इसका विस्तार प्रातिशाख्य ग्रन्थों में मिलता है। वेदों की पृथक् पृथक् शाखाओं का उच्चारण बतलाने के कारण इन्हें प्रातिशाख्य कहा जाता है। ऋक्प्रातिशाख्य शौनक—रचित ग्रन्थ है, जो ऋग्वेद के अक्षरों, वर्णों एवं स्वरों की संधियों का विवेचन करता है। इसी प्रकार अन्य वेदों के भी प्रातिशाख्य हैं, जो उन वेदों के उच्चारणों का वैशिष्ट्य बतलाते हैं। ये सभी सूत्र रूप में हैं।

कल्प— यह मुख्यतः वैदिक कर्मकाण्ड का प्रतिपादन करने वाला वेदाङ्ग है। कल्प का अर्थ है विधान। यज्ञ—सम्बन्धी विधान कल्प सूत्रों में दिए गए हैं। कल्प के चार भेद हैं, जिन्हें श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र, धर्मसूत्र तथा शुल्बसूत्र कहते हैं। ये चारों विभिन्न वेदों के लिए पृथक् पृथक् हैं। श्रौतसूत्रों में श्रौतयज्ञों का विधान है, जैसे—दर्शपूर्णमास, अग्निहोत्र, चातुर्मास्य, वाजपेय, अतिरात्र, पितृमेध इत्यादि। इस समय आश्वलायन, शांखायन (ऋग्वेद), कात्यायन (शुक्लयजुर्वेद), जैमिनीय (सामवेद) वैतान (अथर्ववेद) इत्यादि श्रौतसूत्र उपलब्ध हैं। गृह्यसूत्र गृह्याग्नि में होने वाले संस्कारों तथा गृह्ययागों का वर्णन करते हैं, जैसे उपनयन, विवाह आदि। सभी वेदों से सम्बद्ध लगभग 20 गृह्यसूत्र प्राप्त हैं। धर्मसूत्रों में मानव—धर्म, समाज—धर्म, राजधर्म तथा पुरुषार्थों का वर्णन है। इस समय छः धर्मसूत्र मिलते हैं— गौतम, आपस्तम्ब, वसिष्ठ, बौधायन, हिरण्यकेशी और विष्णुधर्मसूत्र। ये धर्मसूत्र ही परवर्ती स्मृतियों के आधार हैं। शुल्ब का अर्थ है मापने का सूत (धागा)। इन सूत्रों में यज्ञवेदिका के निर्माण आदि का वर्णन रेखागणित (ज्यामिति) की सहायता से किया गया है।

व्याकरण— इसे वेदों का मुख कहा गया है। इस शास्त्र में प्रकृति और प्रत्यय के रूप में विभाजन करके पदों की व्युत्पति बतलाई जाती है। व्याकरण की बहुत लम्बी परम्परा इन्द्र आदि वैयाकरणों से चली, किन्तु उस परम्परा के अवशेष यत्र—तत्र उद्धरणों में ही पाए जाते हैं। प्रथम उपलब्ध व्याकरण ग्रन्थ के प्रणेता पाणिनि ही हैं, जिन्होंने अष्टाध्यायी के रूप में वैदिक और लौकिक संस्कृत दोनों भाषाओं का व्याकरण लिखा है। व्याकरण से वेदों की रक्षा होती है तथा वही पदशुद्धि का विचार करता है। सम्प्रति पाणिनि की अष्टाध्यायी ही व्याकरण का प्रतिनिधि—ग्रन्थ है, जिस पर टीकाओं की समृद्ध परम्परा मिलती है।

निरुक्त— इसका अर्थ है निर्वचन। वैदिक शब्दों का अर्थ व्यवस्थित रूप से समझाना ही निरुक्त का प्रयोजन है। इस समय यास्क रचित निरुक्त ही एक मात्र उपलब्ध निरुक्त है। वैदिक शब्दों का संग्रह निघण्टु (पाँच अध्याय) के रूप में प्राप्त होता है। उसी की व्याख्या यास्क ने निरुक्त के 14 अध्यायों में की है। यास्क का काल 800 ई. पू. माना जाता है। निरुक्त वेदार्थज्ञान की कुंजी है।

ज्योतिष— यह काल का निर्धारण करने वाला वेदाङ्ग है। वैदिक—यज्ञ काल की अपेक्षा रखते हैं और वे किसी निश्चित काल में ही सम्पादित होते हैं, तभी उनका फल मिलता है। इसका निश्चय ज्योतिष करता है। काल का विभाजन, मुहूर्त का निश्चय, ग्रहों—नक्षत्रों की गति का निर्धारण इत्यादि ज्योतिष के ही विषय हैं। लगधाचार्य ने इन कार्यों के लिए वेदाङ्ग ज्योतिष नामक ग्रन्थ लिखा था। इसके दो

संस्करण हैं– आर्च ज्योतिष (ऋग्वेद से सम्बद्ध) जिसमें 36 श्लोक हैं तथा याजुष् ज्योतिष (यजुर्वेद से सम्बद्ध), जिसमें 43 श्लोक हैं।

छन्द – यह पद्यबद्ध वेदमन्त्रों के सही–सही उच्चारण के लिए उपयोगी वेदाङ्ग है। इससे वैदिक मन्त्रों के चरणों का जान होता है। इसका ज्ञान वैदिक मन्त्रों के उच्चारण के लिए आवश्यक है। इससे छन्दः शास्त्र का महत्त्व सिद्ध होता है। वेदों में सात मुख्य छन्द प्रयुक्त हैं– गायत्री (आठ अक्षरों के तीन चरण), अनुष्टुप् (आठ अक्षरों के चार चरण), त्रिष्टुप् (11) अक्षरों के चार चरण) बृहती, जगती, पक्ति, उष्णिक् । छन्दः शास्त्र जानने से वैदिक मन्त्रों के चरणों की व्यवस्था समझी जा सकती है तथा मन्त्र–पाठ के समय उचित विराम हो सकता है।

(ख) लौकिक संस्कृत साहित्य का परिचय

संस्कृत साहित्य को मुख्य रूप से दो भागों में बाँटा गया हैः वैदिक संस्कृत साहित्य और लौकिक संस्कृत साहित्य। जहाँ वैदिक साहित्य का संबंध वेदों, ब्राह्मण ग्रंथों और उपनिषदों से है, वहीं लौकिक संस्कृत साहित्य वह विशाल धारा है जो लौकिक या सामान्य जीवन से जुडी है। इसका कालखंड 500 ईसा पूर्व से प्रारम्भ होकर आगे तक चलता है।

लौकिक संस्कृत साहित्य ने भारतीय संस्कृति, कला, दर्शन, विज्ञान, और सामाजिक मूल्यों को सदियों तक संरक्षित रखा है। यह साहित्य आज भी अपनी प्रासंगिकता और गहराई के कारण विद्वानों और शोधार्थियों के लिए प्रेरणा का स्रोत बना हुआ है।

1. रामायणम्

रामायण के रचयिता वाल्मीकि ने प्रथम अलंकृत काव्य लिखकर समस्त परवर्ती भारतीय कवियों के लिए आदर्श प्रस्तुत किया था (मधुमयभणितीनां मार्गदर्शी महर्षिः)। कहा जाता है कि एक निषाद द्वारा क्रीडारत क्रौञ्च पक्षी के मारे जाने की घटना देखकर, करुणा से वाल्मीकि का हृदय द्रवित हो उठा और उनके मुख से स्वयं ही यह पद्य प्रस्फुटित हो पड़ा–

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।

यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ।।

महर्षि वाल्मीकि की वाणी अनुष्टुप् छन्द में प्रस्फुटित हुई थी जो लौकिक संस्कृत भाषा का श्लोक था। उसी वाणी में उन्होंने आदर्श पुरुष राम की कथा लिखी। रामायण में राम की कथा बहुत विस्तार से वर्णित है जहाँ–तहाँ आवश्यकता के अनुसार इसमें कवि वाल्मीकि ने अवान्तर कथाएँ दी हैं एवं प्रकृति का भी व्यापक वर्णन किया है। वाल्मीकि की दृष्टि इतनी सूक्ष्म है और कल्पना–शक्ति इतनी उर्वर है कि एक–एक दृश्य को उन्होंने बहुत विस्तार प्रदान किया है।

रामायण का विभाजन सात काण्डों में हुआ है– बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड, सुन्दरकाण्ड, युद्धकाण्ड तथा उतरकाण्ड। प्रत्येक काण्ड को सर्गों में विभक्त किया गया है। परवर्ती संस्कृत महाकवियों ने भी रामायण के इस आदर्श पर महाकाव्यों को सर्गों में विभक्त

किया है तथा महाकाव्य के लक्षणों को स्थापित किया। इसी आधार पर कालिदास, भारवि, माघ आदि ने महाकायों की रचना की। रामायण में 24,000 श्लोक हैं।

रामायण के अभी तीन संस्करण उपलब्ध हैं, जो भारत के विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित हैं। तीनों संस्करणों की समीक्षा करके बड़ौदा से रामायण का विशिष्ट संस्करण निकला है।

रामायण के रचनाकाल के विषय में विद्वानों ने बहुत विवेचन किया है। महाभारत से पूर्व इसकी रचना हो चुकी थी, क्योंकि महाभारत में रामायण की पूरी कथा वर्णित है और राम के जीवन से सम्बद्ध कुछ स्थलों को वहाँ तीर्थ के रूप में देखा गया है। रामायण का संकेत जैन और बौद्ध ग्रन्थों से भी प्राप्त होता है। इस प्रकार रामायण की रचना पाँचवी शताब्दी ई. पू. में मानी जाती है।

2. महाभारतम्

महर्षि व्यास द्वारा रचित महाभारत संस्कृत वाक्य का सबसे बड़ा ग्रन्थ है, जिसमें एक लाख श्लोक हैं। इसीलिए इसे शतसाहस्री संहिता भी कहते हैं। महाभारत में मूलतः कौरवों और पाण्डवों का संघर्ष वर्णित है, किन्तु प्रासंगिक रूप से प्रतिपादित जीवन–विषयक प्राचीन भारतीय ज्ञान के सभी पक्षों का यह अद्‌भुत विश्वकोष है। इसका शान्तिपर्व युगों से जीवन की समस्याओं का समाधान करता आ रहा है। इस इतिहास ग्रन्थ को प्राचीन भारतीयों ने धर्म–ग्रन्थ की मान्यता दी है तथा इसे पंचम वेद कहा है। दार्शनिक समस्याओं का समाधान करने वाला विश्वप्रसिद्ध ग्रन्थ भगवद्‌गीता, महाभारत के भीष्मपर्व का एक अंश है। महाभारत अपनी विशालता के अतिरिक्त संसार के सभी विषयों को समाविष्ट करने के कारण महत्त्वपूर्ण है। इसके विषय में कहा गया है–

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ !

यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित् ।।

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों लक्ष्यों के विषय में जो बातें इस ग्रन्थ में कही गई हैं, वे ही अन्यत्र मिलती हैं, किंतु जो इसमें नहीं हैं, वे कहीं नहीं मिलती हैं। इस उक्ति से महाभारत के विवेचनीय विषय की व्यापकता सिद्ध होती है।

रामायण के समान महाभारत भी संस्कृत कवियों के लिए कथानक की दृष्टि से उपजीव्य ग्रन्थ रहा है। इसकी मुख्य कथा तथा उपाख्यानों के आधार पर विभिन्न कालों में संस्कृत कवियों ने काव्य, नाटक, चम्पू, कथा, आख्यायिका आदि अनेक प्रकार की साहित्यिक सृष्टि की है। इण्डोनेशिया, जावा, सुमात्रा आदि देशों के साहित्य पर भी महाभारत का प्रभाव विद्यमान है। वहाँ के लोग भी महाभारत के पात्रों के अभिनय से अपना मनोरंजन करने के साथ–साथ शिक्षा भी ग्रहण करते हैं।

महर्षि वेदव्यास का नाम कृष्णद्वैपायन भी है। महाभारत के पात्रों से उनका घनिष्ठ सम्बन्ध था। महाभारत के आदि–पर्व में कहा गया है कि कृष्णद्वैपायन ने तीन वर्षों तक निरन्तर परिश्रम से महाभारत की रचना की थी। इतिहास के आधुनिक विद्वानों का कहना है कि महाभारत को एक लाख श्लोकों का वर्तमान रूप अनेक शताब्दियों के विकासक्रम में प्राप्त हुआ। व्यास ने प्राचीन काल की गाथाओं को एकत्र करके इस ग्रन्थ की मूल रचना की थी। इसके विकास के तीन चरण हैं– जय, भारत और महाभारत। जय नामक ग्रन्थ में 8,800 श्लोक थे। इसमें पाण्डवों की विजय का वर्णन किया गया था। दूसरे चरण में भारत नामक ग्रन्थ प्रस्तुत हुआ, जिसमें 24,000 लोक थे। इसमें

उपाख्यान नहीं थे। युद्ध का वर्णन ही प्रधान विषय था। इसी भारत को वैशम्पायन ने पढ़कर जनमेजय को सुनाया था। इस ग्रन्थ में जब उपाख्यान आदि जोड़े गए तथा इसे व्यापक विश्वकोश का स्वरूप दिया गया, तब इसका नाम महाभारत पड़ा। यही महाभारत लोमहर्षण के पुत्र उग्रश्रवा द्वारा नैमिषारण्य में शौनकादि ऋषियों को सुनाया गया था। ये उपाख्यान प्राचीन लोककथाओं के साहित्यिक संस्करण थे। इस स्थिति से इसमें एक लाख श्लोक हो गए। यह भारतीय धर्म और संस्कृति का विशाल भण्डार बन गया।

महाभारत के दो पाठ प्राप्त होते हैं– एक उत्तर भारत का, दूसरा दक्षिण भारत का। दोनों में श्लोक–संख्या, अध्यायों का क्रम तथा आख्यानों के स्थान को लेकर बहुत अन्तर है। महाभारत के विशुद्ध रूप को सुनिश्चित करने वाला एक संस्करण पुणे से प्रकाशित हुआ है।

महाभारत का विभाजन पर्वों में हुआ, जिनकी संख्या 18 है आदि, सभा, वन, विराट, उद्योग, भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य, सौप्तिक, स्त्री, शान्ति, अनुशासन, आश्वमेधिक, आश्रमवासिक, मौसल, महाप्रस्थानिक तथा स्वर्गारोहण। इन पर्वों का पुनः विभाजन अध्यायों में हुआ है। इनमें कौरवों तथा पाण्डवों की उत्पत्ति से लेकर पाण्डवों के स्वर्ग जाने तक का वर्णन है। यही महाभारत की मूल कथा है। इसमें बहुत से मार्मिक प्रसंगों का वर्णन किया गया है, जैसे द्यूत–क्रीड़ा, द्रौपदी का अपमान, विराट की राजसभा में पाण्डवों का छद्म रूप से रहना, कौरवों तथा पाण्डवों का युद्ध इत्यादि।

हस्तिनापुर के सिंहासन के लिए कौरवों और पाण्डवों के संघर्ष का इसमें वर्णन है। पाण्डवों ने कौरवों से आधा राज्य प्राप्त कर राजसूय यज्ञ किया, किन्तु ईर्ष्यालु कौरवों ने पाण्डवों को जुए में हराकर उन्हें शर्त के अनुसार तेरह वर्षों के लिए वन जाने को विवश कर दिया। अन्तिम वर्ष में अज्ञातवास की यह शर्त रखी गई कि यदि इस अवधि में पाण्डवों का पता चल गया, तो उन्हें पुनः उतने ही वर्षों के लिए वनवास स्वीकार करना पड़ेगा। पाण्डव सफलतापूर्वक यह शर्त पूरी करने पर अपना राज्य माँगते हैं, किन्तु उन्हें राज्य नहीं दिया जाता। इसीलिए महाभारत का युद्ध होता है जो 18 दिनों तक चलता है। इसमें कौरवों का सर्वनाश हो जाता है। उल्लेखानुसार संजय ने युद्ध का वर्णन नेत्रहीन धृतराष्ट्र के लिए एक स्थान पर बैठे–बैठे किया था। युद्ध के आरम्भ में विषादग्रस्त अर्जुन को युद्ध के लिए श्रीकृष्ण प्रेरित करते हैं और गीता का अमूल्य उपदेश देते हैं। कर्म की प्रेरणा देने वाला भगवद्गीता नामक यह ग्रन्थ इतना महत्त्वपूर्ण है कि प्राचीन काल से आधुनिक काल तक देश–विदेश के दार्शनिकों को प्रभावित करता रहा है।

महाभारत का रचनाकाल बुद्ध–महावीर से पूर्व माना जाता है। इस ग्रन्थ का उल्लेख आश्वलायन गृह्यसूत्र में पहली बार आया है। प्रथम शताब्दी ईसवी में इसका प्रचार दक्षिण भारत में हो गया था।

3. श्रीमद्भगवद्गीता का परिचय

श्रीमद्भगवद्गीता भारतीय साहित्य का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण और पवित्र ग्रंथ है। यह महाभारत के भीष्म पर्व का एक अंश है और इसमें कुल 700 श्लोक हैं, जिन्हें 18 अध्यायों में बांटा गया है।

गीता, कुरुक्षेत्र के युद्ध मैदान में भगवान श्रीकृष्ण और अर्जुन के बीच हुए संवाद का वर्णन करती है। जब अर्जुन अपने ही भाई–बंधुओं और गुरुओं के विरुद्ध युद्ध करने में हिचकिचाते हैं, तब श्रीकृष्ण उन्हें जीवन के कई महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर उपदेश देते हैं।

इस ग्रंथ में कई महत्त्वपूर्ण विषयों पर चर्चा की गई है, जिनमें सम्मिलित हैंः–

कर्मयोगः सही तरीके से अपने कर्तव्यों का पालन कैसे करें।

ज्ञानयोगः ज्ञान और बुद्धि के माध्यम से मोक्ष कैसे प्राप्त करें।

भक्तियोगः भगवान के प्रति सच्ची भक्ति और प्रेम का महत्व।

धर्म और अधर्मः सही और गलत के बीच का अंतर।

आत्मा और परमात्माः आत्मा की अमरता और भगवान के साथ उसका संबंध ।

गीता को सिर्फ एक धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि एक जीवन–दर्शन माना जाता है। यह हमें सिखाती है कि हम अपने कर्तव्यों का पालन बिना फल की चिंता किए कैसे करें। यह हमें तनाव, भय और दुविधा से बाहर निकलने का रास्ता दिखाती है। यही कारण है कि यह आज भी लाखों लोगों के लिए प्रेरणा का स्रोत है। गीता को प्रस्थानत्रयी का भी एक अंग माना जाता है

4. पंचतंत्रम्

पंचतंत्र एक विश्वविख्यात कथा ग्रन्थ है, जिसके रचयिता आचार्य विष्णु शर्मा है। इस ग्रन्थ में प्रतिपादित राजनीति के पाँच तंत्र (भाग) हैं। इसी कारण से इसे 'पंचतंत्र' नाम प्राप्त हुआ है। भारतीय साहित्य की नीति कथाओं का विश्व में महत्वपूर्ण स्थान है। पंचतंत्र उनमें प्रमुख है। पंचतंत्र को संस्कृ त भाषा के साधारणीकृत अर्थ में 'पाँच निबंध या 'अध्याय' भी कहा जाता है।

पंचतंत्र की कहानी मुख्य रूप से राजा अमरशक्ति के तीन मूर्ख पुत्रों को सुनाई गई थी, जिन्हें ज्ञान, नीति और बुद्धिमत्ता की शिक्षा देने के लिए विष्णु शर्मा नियुक्त किया था। इन कहानियों के माध्यम से पशु–पक्षियों की बातों को एक रोचक तरीके से प्रस्तुत करके राजकुमारों को उचित और अनुचित की शिक्षा दी गई थी।

इस ग्रन्थ में जानवरों को पात्र बनाकर शिक्षाप्रद बातें लिखी गई हैं। इसमें मुख्यतः पिंगलक नामक सिंह के सियार मंत्री के दो बेटों दमनक और करटक के बीच के संवादों और कथाओं के जरिए व्यावहारिक ज्ञान की शिक्षा दी गई है। सभी कहानियां प्रायः करटक और दमनक के मुंह से सुनाई गई हैं। पंचतंत्र के पांच अध्याय (तंत्र/भाग) हैं।

1. मित्रभेद (मित्रों में मनमुटाव एवं अलगाव)
2. मित्रलाभ या मित्रसंप्राप्ति (मित्र प्राप्ति एवं उसके लाभ)
3. काकोलुकीयम् (कौवे एवं उल्लुओं की कथा)
4. लब्धप्रणाश (मृत्यु या विनाश के आने पर, यदि जान पर आ बने तो क्या?)
5. अपरीक्षित कारक (जिसको परखा नहीं गया हो उसे करने से पहले सावधान रहे; हड़बड़ी में कदम न उठायें)

इस पुस्तक की महत्ता इसी से प्रतिपादित होती है कि इसका अनुवाद विश्व की लगभग हर भाषा में हो चुका है। मूल रूप में संस्कृत में रचित इस ग्रंथ का हिंदी भाषा में प्रकाशन कई विदेशी भाषाओं में प्रकाशन के बाद हुआ। अब विलुप्त हो चुकी पंचतंत्र की मूल संस्कृत कृति (रचना) संभवतः 100 ई.पू. से 500 ई. के बीच किसी समय अस्तित्व में आई थी।

5. हितोपदेशः

हितोपदेश भारतीय साहित्य की एक प्राचीन और महत्त्वपूर्ण कृति है जो नीति और ज्ञान की शिक्षा देती है। इसकी रचना दसवीं शताब्दी में नारायण पंडित ने की थी। यह संस्कृत भाषा में लिखा गया है और इसमें पशु–पक्षियों की कहानियों के माध्यम से जीवन के व्यावहारिक सिद्धांतों और नैतिक मूल्यों को समझाया गया है।

हितोपदेश का शाब्दिक अर्थ है 'हित का उपदेश' या 'कल्याणकारी शिक्षा'। यह पंचतंत्र पर आधारित है, लेकिन इसमें कुछ नई कहानियां जोड़ी गई हैं। पंचतंत्र से भी कुछ कहानियां ली गई हैं इसकी कहानियों को चार मुख्य भागों में विभाजित किया गया हैः मित्रलाभ (मित्र बनाना), सुहृद्भेद (मित्रों में भेद), विग्रह (युद्ध) और संधि (शांति)।

इन कहानियों में यह बताया गया है कि हमें कैसे अच्छे मित्र बनाने चाहिए, बुरे मित्रों से कैसे बचना चाहिए, संकट के समय कैसे व्यवहार करना चाहिए और शांति और सद्भाव बनाए रखने के लिए क्या करना चाहिए।

हितोपदेश की लोकप्रियता का मुख्य कारण इसकी सरल और बोधगम्य शैली है। इसमें छोटी–छोटी कहानियां हैं, जो बच्चों से लेकर बड़ों तक सभी के लिए शिक्षाप्रद हैं। यही कारण है कि इसका अनुवाद दुनिया की कई भाषाओं में हो चुका है, जिससे यह एक वैश्विक धरोहर बन गया है। हितोपदेश आज भी हमें यह सिखाता है कि जीवन में सफल और सुखी रहने के लिए ज्ञान, बुद्धि और अच्छे व्यवहार का होना कितना आवश्यक है।

परिशिष्टम्

(क) व्यावहारिकं संस्कृतम्

1.संस्कृत–भाषायाम् आत्मपरिचयस्य व्यवहारः

यथा–

अहम् नरेशः, भवान् कः ? (पुं.)
मैं नरेश हूँ, आप का नाम ?

अहम् सुरेशः ।
मैं सुरेश हूँ।

अहम् साधना, भवती का ? (स्त्री.)
मैं साधना हूँ, आप का नाम ?

अहम् भावना।
मैं भावना हूँ।

भवतः नाम किम् ? (पुं.)
आप का शुभनाम ?

भवत्याः नाम किम् ? (स्त्री.)
आप का शुभनाम ?

मम नाम महेशः ।
मेरा नाम महेश है।

मम नाम सौम्या ।
मेरा नाम सौम्या है।

अयं मम मित्रं नरेशः ।
यह मेरा मित्र नरेश है।

एतेषां विषये श्रुतवान् ।
इनके विषय में सुना है।

एषा मम सखी 'सरला'
यह मेरी सखी सरला है।

भवान् किम् कार्यम् करोति ? । (पुं.)
आप क्या करते हैं?

भवती किम् कार्यम् करोति ? (स्त्री.)
आप क्या करती हैं?

अहम् अध्यापकः अस्मि। (पुं.)
मैं अध्यापक हूँ।

अहम् अध्यापिका अस्मि । (स्त्री.)
मैं अध्यापिका हूँ।
..........इत्यादयः।

अभ्यासः–

(क) अहम् विनोदः। भवान् क? अहम्..............................
(ख) अहम् विभा। भवती का? अहम्.................................
(ग) मम नाम महेन्द्रः। भवत्याः नाम किम्? मम......................................
(घ) मम नाम भावना। भवतः नाम किम्? मम.......................................
(ङ) भवान् किं कार्यं करोति? अहम्..............................
(च) भवती किं कार्यं करोति? अहम्.................................

2 शब्दरूपाणां वाक्येषु प्रयोगः

यथा–

विभक्तिः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	बालकः	बालकौ	बालकाः
द्वितीया	बालकम्	बालकौ	बालकान्
तृतीया	बालकेन्	बालकाभ्याम्	बालकैः
चतुर्थी	बालकाय	बालकाभ्याम्	बालकेभ्यः
पंचमी	बालकात्	बालकाभ्याम्	बालकेभ्यः
षष्ठी	बालकस्य	बालकयोः	बालकानाम्
सप्तमी	बालके	बालकयोः	बालकेषु
सम्बोधन	हे बालक!	हे बालकौ!	हे बालकाः!

(क) बालकः पठति।

(ख) आचार्यः बालकम् पाठयति।

(ग) बालकेन सह बालिका गच्छति।

(घ) बालकाय मोदकं प्रियम् अस्ति।

(ङ) बालकात् पुस्तकम् आनयति।

(च) बालकस्य पुस्तकम् अस्ति।

(छ) बालके गुणाः सन्ति।

(ज) हे बाल! पुस्तकं पठ।

3 धातुरूपाणां वाक्येषु प्रयोगः

यथा– पठ् धातुः लट्लकारः (वर्तमान काल)

पुरुषः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	पठति	पठतः	पठन्ति
मध्यमपुरुषः	पठसि	पठथ	पठथ
उत्तमपुरुषः	पठामि	पठावः	पठामः

(क) सः / सा / अयम् / बालकः / बाला पठति

(ख) तौ / ते / इमौ / बालकौ / बाले पठतः

(ग) ते / ताः इमे / बालकाः पठन्ति

(घ) त्वं पठसि

(ङ) युवां पठथः

(च) यूयं पठथ

(छ) अहं पठामि

(ज) आवां पठावः

(झ) वयं पठामः

(शिक्षकाः छात्राणां माध्यमेन अस्य अभ्यासं कारयिष्यन्ति।)